इस ग्रन्थकारके गुरुजी



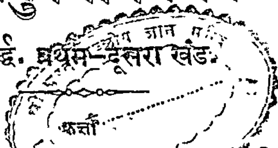
श्रीमन्मुनिवर्य श्रीसुमति सागरजी महाराज।
ज्ञाति वीशाश्रीमवाल, नागोर मारवाड़।
जन्म संवत् १८१७। दीक्षा संवत् १८४४।

॥ अर्हम् ॥ ३(६)77

श्रीशांतिनाथाय नमः ॥

# बृहत्पर्युषणा निर्णयः

## पूर्वार्द्ध. प्रथम-दूसरा खंड.



कर्त्ता

श्रीमान् परमपूज्य उपाध्यायजी श्री १००८ श्री सुमति-
सागरजी महाराजके लघु शिष्य मुनि-
श्रीमणिसागरजी महाराज.

प्रसिद्ध कर्त्ता

कलकत्ता, मुर्शिदावाद, बीकानेर, जयपुर, जेसलमेर,
मुंबई, धूलिया, चालीसगांव वगैरह शहरोंके
जैनसंघकी द्रव्य साहायतासे

श्रीमत् अभयदेवसूरि ग्रंथमालाके कार्यवाहक कलकत्ता. तथा
श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञानभंडारके कार्यवाहक, शा. पानाचंद भगुभाई, सुरत.

मूलग्रंथ बी. एल. प्रेस, कलकत्तामें छपा.
भूमिकादि, धि आत्माराम प्रिंटिंग ॲन्ड पब्लिशिंग कंपनी, श्री. वि.
ग. जावडेकर द्वारा आत्माराम छापखाना धूलियामें छपा.

श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४४७. विक्रम संवत् १९७८.
वैशाख शुदी ३ मंगल वार.

प्रथम वार २१५० कॉपी.] भेट [ मूल्य सत्य ग्रहण.

॥ श्रीचंद्रप्रभस्वामिने नमः ॥

## याद रखने योग्य उपयोगी सूचना.

१–आत्मार्थी हे! भव्यजीवों खरतरगच्छ, तपगच्छ, कमलागच्छ, अंचलगच्छ, पायचंदगच्छादिकके आग्रहकीबातें करनेमें आत्मकल्याण मुक्तिनहींहै, किंतु जिनाज्ञानुसारभावसे शुद्धधर्मक्रियाकरनेमें मुक्तिहै. इसलिये अपने २ गच्छकी परंपरा रूढीको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी परीक्षाकरके उसमुजबधर्मकार्यकरो उससे श्रेयहो.

२– श्रीसर्वज्ञ भगवान्के कहे हुए अतीवगहनाशयवाले, अपेक्षा सहित, अनंतार्थयुक्त जैनशास्त्र अविसंवादीहैं, मगर "कत्थइ देसग्गहणं, कत्थइ घिप्पंति निरवसेसाइं । उक्कमकम जुत्ताइं, कारण वसओ निरुत्ताइं ॥ १ ॥" श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रकी वृत्तिके इस महावाक्य मुजब–सामान्य, विशेष, ओपमा, वर्णनक, उत्सर्ग, अपवाद, विधि, भय, निश्चय, व्यवहारादिक संबंधी शब्दार्थ, भावार्थ, लक्ष्यार्थ, वाच्यार्थ, संबंधार्थादि भेदोंवाले गंभीरार्थके भावार्थ संबंधी शास्त्रवाक्योंको समझे बिनाही अभी अविसंवादी सर्वज्ञशासनमें कितने गच्छोंके भेदोंका आग्रह बढगयाहै. देखो- "गच्छना भेद बहु नयण निहालतां, तत्त्वनीबातकरतां न लाजे । उदरभरणादि निजकाज करतांथकां, मोहनडिया कलिकालराजे ॥ १ ॥ देवगुरुधर्मनी शुद्धि कहो किमरहे, किमरहे शुद्ध श्रद्धान आणो । शुद्धश्रद्धाविना सर्वकिरियाकरी, छारपर लिपणो तेह जाणो ॥ २ ॥ पापनहीं कोई उत्सूत्रभाषण जिस्युं, धर्मनहीं कोई जगसूत्र सरिखो । सूत्र अनुसारें जे भविक किरिया करें, तेहनो शुद्ध चारित्र परिखो ॥ ३ ॥ इत्यादि बातोंको विचार कर आत्मार्थियोंको अपना असत्य आग्रहको छोडकर अपनी आत्माको हितकारी, सुखकारी होवे, वैसा सत्य ग्रहण करना चाहिये.

३– कितनेक मुनिमहाशय वर्षोंवर्ष पर्युषणापर्वके व्याख्यानमें अधिकमहीनेके व श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोंके निषेध संबंधी चर्चा उठाते हैं, उससे भोले लोगोंको अनेक तरहकी शंकायें उत्पन्न होती हैं, और कितनेही महाशयतो इन बातोंमें तत्त्वदृष्टिसे सत्य असत्यका निर्णय किये विनाही अपने पक्षको सत्य मान्य करके दूसरोंको झूठे ठहरानेका एकांत आग्रह करते हैं । शास्त्रोंमें एकांत आग्रहको और

शंकारूपी शल्यको एकप्रकारसे मिथ्यात्वही कहाहै, उसका निवारण करनेकेलिये और शास्त्रानुसार सत्य बातोंका निर्णय बतलानेकेलिये वर्तमानिक सर्व शंकाओंका समाधान सहित मैने यह ग्रंथ बनायाहै, मगर मेरी तरफसे किसी तरहका नवीन विवाद शुरूकरनेकेलिये नहीं बनाया. इसलिये इस ग्रंथके बनानेमें सुबोधिका, किरणावली वो बनेवाले कितनेक विद्वान् मुनि महाशयही कारणभूत हैं, पाठक गण इसमें मेरेको किसी तरहका दोषी न समझें, मैने तो उन्होंकी शंकाओंका समाधान लिखा है.

४– शुद्धश्रद्धाविना द्रव्यसे व्यवहारमें चाहे जितनेधर्मकार्य करें, तो भी आत्म कल्याण करने वाले नहीं होते, और आग्रही लोगोंकी अभी अलग २ प्ररूपणा होनेसे भोले जीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्य बातकी प्राप्ति होना बहुत मुश्किल होरहा है. और अविसंवादी रूप आगम-पंचांगी-प्रकरण-चरित्रादि सर्वशास्त्रोंको मानने वालोंमें पर्युषणा–छ कल्याणक–सामायिकादि विषयों संबंधी शास्त्रकारमहाराजोंके अभिप्रायको न समझनेसे व्यर्थही विसंवाद होरहाहै, उसकानिर्णय करनेके लिये और भव्यजीवोंको शुद्धश्रद्धारूप सम्यक्त्व रत्नकी प्राप्तिके उपकारकेलिये मैने यह ग्रंथ बनायाहै। मगर किसी गच्छके साधु–श्रावकोंको किसी अन्य गच्छमें ले जानेके लिये नहीं बनाया. किसी गच्छमें रहो, परंतु आपसमें राग द्वेष निंदा ईर्षा अंगतविरोधादिक बखेडे छोडकर शुद्ध श्रद्धापूर्वक आत्मिक कल्याण करनेके लियेही इस ग्रंथकी रचना करनेमें आयी है, इसलिये पक्षपात छोडकर इस ग्रंथको वारंवार पूरेपूरा वांच, विचार, मननकर सत्य समझकरके शांति पूर्वक शुद्ध श्रद्धासहित अपना आत्मसाधन करके आत्मार्थी पाठकगण मेरे परिश्रमको सफल करेंगे.

५–जिनाज्ञानुसार शुद्धश्रद्धापूर्वकभावसे धर्मकार्य करनेका योग महान्पुण्योदयहोवे तब प्राप्तहोताहै, इसलिये उसमें लोकपूजा बहुत समुदायवगैरहकी प्रवृत्तिमुजब करना योग्यनहींहै. इसकालमें आत्मार्थीअल्पही होते हैं. कदाचित् गच्छ-गुरुपरंपरा–बहुत समुदाय वगैरह बाह्यकारणोंसे आज्ञामुजब क्रियाकरनेका योग न बनसके तोभी शुद्धश्रद्धा–प्ररूपणा तो आज्ञामुजब सत्यबातोंकीही करना योग्यहै, उससे भवांतरमें सुलभबोधिकी प्राप्ति हो सकेगी. मगर गुरु-गच्छ–लोकसमुदायके आग्रहसे जिनाज्ञा बाहिर क्रिया करतेहुए आज्ञामुजब सत्यबातोंका निषेध करनेसे भवांतरमें दुर्लभबोधिकी प्राप्ति होतीहै,

इसलिये भवाभिरुयोंको गुरु गच्छ व लोक समुदायादिकका पक्षरखने-के बदले जमालिके शिष्योंकी तरह जिनाज्ञाका पक्ष रखनाही योग्यहै, अर्थात्-जैसे-अपने गुरु जमालिके उत्सूत्रप्ररूपणाके पक्षकोछोडकर बहुत भव्यजीव भगवान्की आज्ञामुजब माननेलगेथे,तैसेही-अभीभी आत्मार्थियोंको करना योग्य है. यही सम्यक्त्वका मुख्य लक्षण है.

६-मैंरे बनाये इस एक ग्रंथके सामने अनेकग्रंथ लिखेजानेकी मेरेको कोई परवाह नहींहै, देखो-जैसे एकवीतराग सर्वज्ञभगवान्के परोपकारी जैन आगमोंके विरुद्ध हजारों मतवादी अनेक तरहसे अपना २ कथन करते हैं. मगर तत्त्व दृष्टिसे आत्महितकारी सत्य बात क्या है, यही देखा जाता है. तैसेही- मैंरे बनाये इस ग्रंथपरभी १-२ नहीं; परंतु १०-२० लेखकभी अपना २ विचार खुशसे लिखें. मगर जिनाज्ञानुसार सत्य बात क्या है. यही देखना है. झूठे मतवादियोंका यही स्वभाव है, कि- हजारों सत्य बातें छोड देते हैं, और अतिशयोक्तिमें या क्रोधमें आकर क्लेश बढानेलगजातेहैं, मगर अपनी बात को छोडते नहीं. वैसे इस ग्रंथपर न होना चाहिये यही प्रार्थनाहै.

७- इस ग्रंथमें पर्युषणा संबंधी अधिक महीनेके ३० दिनोंकी गिनतीसहित आषाढचौमासीसे ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करनेका तथा श्रावण भाद्रपद आसोज अधिक महीने होंवे तब पर्युषणाके पीछे कार्तिकतक१०० दिन ठहरनेका खरतर गच्छ,तपगच्छ, अंचलगच्छ,पायचंदगच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार और निशीथचूर्णि, वृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, स्थानांग सूत्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रपाठानुसार अच्छी तरहसे साबित करके बतलाया है। जैसे अधिक महीना होंवे तोभी ५० दिने पर्युषणापर्व करनेकी सर्व शास्त्रोंकी आज्ञा है, वैसेही-अधिकमहीना होवे तोभी पीछे हमेश ७०दिन रहनेकी आज्ञा किसीभी शास्त्रमें नहीं है, समवायांगसूत्रका पाठ तो सामान्य रीतिसे अधिक महीना न होंवे तब ४ महीनोंके वर्षाकाल संबंधी है, उसका भावार्थ समझे विना अधिकमहीना होवे तब अभी पांच महीनोंके वर्षाकालमेंभी उसी सामान्य पाठको आगे करना और १०० दिन पीछे रहनेसंबंधी अनेक शास्त्रोंके विशेष पाठोंकी बातको छोड देना यह सर्वथा अनुचित है।

८-लौकिकटिप्पणामें दो श्रावणादिमहीने होंवे,तब पांचमहीनोंका वर्षाकाल मान्य करना यह बात अनुभवसिद्ध प्रत्यक्ष प्रमाणानुसार

है,तोभी उनको ४ महीनोंका वर्षाकाल कहनेसे मिथ्या भाषण करने-कादोषआताहै। यदि अभी वर्तमानमें अधिकमहीनेश्रावणादि होनेपर भी जैनशास्त्रानुसार ४ महीनोंका वर्षाकालमानोंगे, तो,पौष-आषाढ अधिक होनेवाला ८८ ग्रहसहित जैनपंचांगभी अभी मानना पडेगा. मगर वो जैनपंचांग तो अभी विच्छेदहै, इसलिये लौकिकपंचांग मुजब व्यवहार करनेमेंआताहै। अब यहांपर विवेकबुद्धिसे न्यायपूर्वक विचारकरना चाहिये, कि-अभी पौष-आषाढमहीनेकी वृद्धिवाला८८ ग्रह सहित जैनपंचांग विच्छेदभी मानना. व लौकिक पंचांग मुजब व्यवहारभी करना. और लौकिक पंचांग मुजब अधिकमहीने दो श्रावण,या दो भाद्रपद,या दो आसोजभी मानने. फिर ४महीनोंकावर्षाकालभी कहना, यह तो ' बालचेष्टा' की तरह पूर्वापर विरोधी विसंवादी कथनकरना विवेकी विद्वानोंको सर्वथाही योग्य नहींहै। अधिकश्रावणादिमहीने नहींमानने होंवे तो अभी अधिकपौषादि वाला जैनपंचांग बतावो अथवा लौकिक पंचांग मुजब अधिक श्रावणादि मानो तो अधिकपौषादिका बहाना बतलाकर ४ महीनोंकावर्षाकाल कहनेका आग्रहछोडो। अधिकश्रावणादिभी मानोंगे और ४ महीनोंका वर्षाकालभी कहोंगे, यह कभी नहीं बन सकेगा. विच्छेद जैनपंचांगकी बातका आश्रय लेना और प्रत्यक्ष विद्यमान बातका निषेध करना, यह न्याय विरुद्धहै। पहिले पौष आषाढ बढतेथे तबभी फाल्गुन और आषाढचौमासा पांचर महीनोंसे होताथा और अभी श्रावणादिबढतेहैं तब कार्त्तिक चौमासाभी पांचमहीनोंका होताहै.अभी जैनपंचांग विच्छेद होनेसे लौकिक पंचांग मुजब अधिक श्रावणादि मान्यकरके उसमुजब व्यवहार करना युक्तियुक्त व पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसारहै, जिसपरभी अधिक श्रावणादि होंवे,तब पांच महीनों के वर्षाकालमें ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व आराधन करनेका उल्लंघन करना और पीछे १०० दिन रहने की जगह ७० दिन रहनेका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है. देखो—

यद्यपि जैन पंचांगमें ४ महीनोंका वर्षाकाल कहाहै, परंतु जैन पंचांगके अभावसे अभी लौकिक पंचांग मुजब श्रावणादि बढतेहैं, तब पांच महीनोंका वर्षाकालभी मानना पडता है, इसलिये इसका निषेधकरना सर्वथा अनुचितहै.बस! पौष-आषाढमहिनेकी वृद्धिसहित ४ महीनोंके वर्षाकाल वाला जैन पंचांग शुरू बतावो या लौकिक पंचांग मुजब श्रावणादि बढें तब पांच महीनोंका वर्षाकाल

इसलिये भवाभिरुयोंको गुरु गच्छ व लोक समुदायादिकका पक्षरखने के बदले जमालिके शिष्योंकी तरह जिनाज्ञाका पक्ष रखनाही योग्यहै, अर्थात्-जैसे-अपने गुरु जमालिके उत्सूत्रप्ररूपणाके पक्षकोछोडकर बहुत भव्यजीव भगवान्‌की आज्ञामुजब माननेलगेथे,तैसेही-अभीभी आत्मार्थियोंको करना योग्य है. यही सम्यक्त्वका मुख्य लक्षण है.

६-मेरे बनाये इस एक ग्रंथके सामने अनेकग्रंथ लिखेजानेकी मेरेको कोई परवाह नहींहै, देखो-जैसे एकवीतराग सर्वज्ञभगवान्‌के परोपकारी जैन आगमोंके विरुद्ध हजारों मतवादी अनेक तरहसे अपना २ कथन करते हैं. मगर तत्त्व दृष्टिसे आत्महितकारी सत्य बात क्या है, यही देखा जाता है. तैसेही- मेरे बनाये इस ग्रंथपरभी १-२ नहीं; परंतु १०-२० लेखकभी अपना २ विचार सुखसे लिखें. मगर जिनाज्ञानुसार सत्य बात क्या है. यही देखना है. झूठे मतवादियोंका यही स्वभाव है, कि- हजारों सत्य बातें छोड देते हैं, और अतिशयोक्तिमें या क्रोधमें आकर क्लेश बढानेलगजातेहैं, मगर अपनी बात को छोडते नहीं. वैसे इस ग्रंथपर न होना चाहिये यही प्रार्थनाहै.

७- इस ग्रंथमें पर्युषणा संबंधी अधिक महीनेके ३० दिनोंकी गिनतीसहित आषाढचौमासीसे ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करनेका तथा श्रावण भाद्रपद आसोज अधिक महीने होंवे तब पर्युषणाके पीछे कार्तिकतक१०० दिन ठहरनेका खरतर गच्छ, तपगच्छ, अंचलगच्छ,पायचंदगच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार और निशीथचूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, स्थानांग सूत्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रपाठानुसार अच्छी तरहसे साबित करके बतलाया है। जैसे अधिक महीना होंवे तोभी ५० दिने पर्युषणापर्व करनेकी सर्व शास्त्रोंकी आज्ञा है, वैसेही-अधिकमहीना होवे तोभी पीछे हमेश ७०दिन रहनेकी आज्ञा किसीभी शास्त्रमें नहीं है, समवायांगसूत्रका पाठ तो सामान्य रीतिसे अधिक महीना न होंवे तब ४ महीनोंके वर्षाकाल संबंधी है, उसका भावार्थ समझे विना अधिकमहीना होवे तब अभी पांच महीनोंके वर्षाकालमेंभी उसी सामान्य पाठको आगे करना और १०० दिन पीछे रहनेसंबंधी अनेक शास्त्रोंके विशेष पाठोंकी बातको छोड देना यह सर्वथा अनुचित है।

८-लौकिकटिप्पणामें दो श्रावणादिमहीने होंवे,तब पांचमहीनोंका वर्षाकाल मान्य करना यह बात अनुभवसिद्ध प्रत्यक्ष प्रमाणानुसार

है,तोभी उनको ४ महीनोंका वर्षाकाल कहनेसे मिथ्या भाषण करनेकादोषआताहै। यदि अभी वर्तमानमें अधिकमहीनेश्रावणादि होनेपर भी जैनशास्त्रानुसार ४ महीनोंका वर्षाकालमानोंगे, तो,पौष-आषाढ अधिक होनेवाला ८८ ग्रहसहित जैनपंचांगभी अभी मानना पडेगा. मगर वो जैनपंचांग तो अभी विच्छेदहै, इसलिये लौकिकपंचांग मुजब व्यवहार करनेमें आताहै। अब यहांपर विवेकबुद्धिसे न्यायपूर्वक विचारकरना चाहिये, कि-अभी पौष-आषाढमहीनेकी वृद्धिवाला८८ ग्रह सहित जैनपंचांग विच्छेदभी मानना. व लौकिक पंचांग मुजब व्यवहारभी करना. और लौकिक पंचांग मुजब अधिकमहीने दो श्रावण,या दो भाद्रपद,वा दो आसोजभी मानने. फिर ४महीनोंकावर्षाकालभी कहना, यह तो 'बालचेष्टा' की तरह पूर्वापर विरोधी विसंवादी कथनकरना विवेकी विद्वानोंको सर्वथाही योग्य नहींहै। अधिकश्रावणादिमहीने नहींमानने होवे तो अभी अधिकपौषादि वाला जैनपंचांग बतावो अथवा लौकिक पंचांग मुजब अधिक श्रावणादि मानो तो अधिकपौषादिका बहाना बतलाकर ४ महीनोंकावर्षाकाल कहनेका आग्रहछोडो। अधिकश्रावणादिभी मानोंगे और ४ महीनोंका वर्षाकालभी कहोंगे, यह कभी नहीं बन सकेगा. विच्छेद जैनपंचांगकी बातका आश्रय लेना और प्रत्यक्ष विद्यमान बातका निषेध करना, यह न्याय विरुद्धहै। पहिले पौष आषाढ बढतेथे तबभी फाल्गुन और आषाढचौमासा पांच२ महीनोंसे होताथा और अभी श्रावणादिबढतेहैं तब कार्त्तिक चौमासाभी पांचमहीनोंका होताहै.अभी जैनपंचांग विच्छेद होनेसे लौकिक पंचांग मुजब अधिक श्रावणादि मान्यकरके उसमुजब व्यवहार करना युक्तियुक्त व पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसारहै, जिसपरभी अधिक श्रावणादि होवे,तब पांच महीनोंके वर्षाकालमें ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व आराधन करनेका उल्लंघन करना और पीछे १०० दिन रहने की जगह ७० दिन रहनेका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है. देखो-

यद्यपि जैन पंचांगमें ४ महीनोंका वर्षाकाल कहाहै, परंतु जैन पंचांगके अभावसे अभी लौकिक पंचांग मुजब श्रावणादि बढतेहैं, तब पांच महीनोंका वर्षाकालभी मानना पडता है, इसलिये इसका निषेधकरना सर्वथा अनुचितहै.बस! पौष-आषाढमहिनेकी वृद्धिसहित ४ महीनोंके वर्षाकाल वाला जैन पंचांग शुरू बतावो या लौकिक पंचांग मुजब श्रावणादि बढें तब पांच महीनोंका वर्षाकाल

मान्य करो और जब पांच महीनोका वर्षाकाल मान्य हुआ तो फिर अधिकमहीना निषेध करनेकी व पर्युषणाके पीछे ७० दिन हमेश रखने वगैरहकी सर्व बातें आपही आप निष्फल हो जाती हैं

इसतरहसे अधिकमहीनेकेनिषेधसंबंधी धर्मसागरजीने 'कल्प किरणावली'में, जयविजयजीने 'कल्प दीपिका'में, विनयविजयजीने 'सुबोधिका'में,कांतिविजयजी-अमरविजयजीने'जैन सिद्धांत समाचारी' में,शांतिविजयजीने'मानवधर्मसंहिता'में,वल्लभविजयजीने जैनपत्रमें, विद्याविजयजीने 'पर्युषणा विचार'में,कुलमंडनसूरिजीने 'विचारामृत संग्रह'में, हर्षभूषणजीने 'पर्युषणास्थिति'में, और वर्तमानिक चर्चाके हेंडबिलें, किताबें वगैरहमें जो जो शंकायें कीहैं,उन सर्व शंकाओंका खुलासा पूर्वक समाधान इस ग्रंथकी भूमिकामें व पीठिकामें और इस ग्रंथमें अच्छी तरहसे लिखनेमें आयाहै, इसलिये जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करनेकी इच्छावाले,सत्यतत्त्वाभिलाषी,आत्महितैषी पाठक गण इसग्रंथको पूर्णतया वांचकर सत्यसार ग्रहण करें।

९-तीर्थंकर भगवान्के च्यवन-जन्म-दीक्षादिकोंको कल्याणक माननेका आगमानुसार अनादि सिद्ध है,इसलिये श्री महावीरस्वामिभी देवलोकसे देवानंदामाताके गर्भमें आषाढ शुदी ६ को आये; उनको प्रथम च्यवन कल्याणक, और आसोजवदी १३ को देवानंदामाताकेगर्भसे त्रिशलामाताके गर्भमें आये; सो गर्भापहाररूप (गर्भसंक्रमणरूप)दूसराच्यवन कल्याणक माननेका स्थानांग-आचारांग-दशाश्रुतस्कंधादिक आगम पंचांगी प्रकरण चरित्रादि अनेक शास्त्रानुसार और वडगच्छ, चंद्रगच्छ, उपकेशगच्छ ( कमलागच्छ ) खरतरगच्छ,तपगच्छ, अंचलगच्छ, पायचंदगच्छादि अनेक गच्छोंके पूर्वाचार्योंके ग्रंथानुसार अच्छी तरहसे सिद्ध करके बतलायाहै. च्यवन-जन्म-दीक्षादिकोंको चाहे वस्तु कहो, चाहे स्थानकहो, चाहे कल्याणक कहो. इन तीनोंबातोंमें प्रसंगोपात संबंधानुसार पर्याय वाचक एकार्थवाले शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकही है, उस बातकाभेद समझे विनाही च्यवन-जन्म-दीक्षादिकाको वस्तु-स्थान कहकर कल्याणक पनेका निषेध करके आगमार्थरूप पंचांगीको उत्थापनकरनेके दोषी बनना किसीकोभी योग्य नहीं है।

१०- श्रीवीरप्रभुके आषाढ शुदी ६ को प्रथम च्यवनकल्याणक मान्यकरके;आसोजवदी १३ को दूसरेच्यवनको कल्याणकपनेका निषेध करनेवालोंको न्यायबुद्धिसे विचार करना चाहिये, कि-तीर्थंकर

भगवान्केच्यवनकल्याणकसमय उनकी माता१४महास्वप्न आकाशसे उत्तरतेहुएदेखतीहैं, उसीसमय तीनजगतमें उद्द्योत होता है व सर्व संसारीप्राणीमात्रको सुखकीप्राप्तीहोती है, और इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्को देखकर विधिपूर्वक पूर्णभक्तिसहित नमुत्थुणंरूप नमस्कारकरके तत्काल माताके पासआकर१४ महास्वप्न देखनेसे स्वप्नोंके अनुसार तीनजगतकेपूज्यनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहकर इन्द्रमहाराज अपने स्थानपरजाते हैं. और प्रभातसमय फजरमें राजा स्वप्न पाठकोंसे १४ महास्वप्नोंकाफल पूछताहै,तब तीर्थंकर पुत्र होनेका सुनकर हर्ष सहित महोत्सव करता है, और इन्द्र महाराज देवताओं द्वारा उस रोजसे भगवान्के माता-पिताके घरमें धन धान्यादिकसे राज्य ऋद्धिकीवृद्धि करवातेहैं इत्यादि तीर्थंकरभगवान्के च्यवनकल्याणकके कार्यहोतेहैं, यही सर्व कार्य आषाढसुदी ६के रोज भगवान् देवानंदामाताके गर्भमें आये;तब नहीं हुए,किंतु आसोज वदी १३के रोज त्रिशलामाताके गर्भमें आये; तब उससमय हुएहैं, क्योंकि देखो-आषाढ सुदी ६ को तो प्राचीन कर्मके उदयसे भगवान् ब्राह्मणीदेवानंदामाताके गर्भमें आये. और ८२दिनतकवहां ठहरनापडा,उनको कल्पसूत्रादिक शास्त्रोंमें अच्छेरा कहाहै, इसलिये ८२ दिन तकतो इन्द्रादिक किसीकोभी तीर्थंकरभगवान्के उत्पन्न होनेकी मालूम न पडी,मगर संपूर्ण८२ दिन गयेबाद इन्द्रमहाराजको अवधिज्ञानसे मालूमपडी उसीसमय पूर्णहर्षसहित नमुत्थुणंकिया और हरिणेगमेषिदेवको आज्ञाकरके क्षत्रियाणीत्रिशला माताके गर्भमें पधराये, तब त्रिशलामातानें(देवानंदाके १४महास्वप्न हरणकरनेका१स्वप्न नहीं देखा-किंतु)तीर्थंकर भगवान्के च्यवन कल्याणककी सूचनाकरने वाले १४ महास्वप्न आकाशसे उत्तरते हुए और अपने मुखमें प्रवेश करते हुए देखे हैं. इसलिये खास कल्पसूत्रके मूल पाठमेंभी "एए चउद्दस सुमिणा, सव्वा पासेई तित्थयर माया। जं रयणि वक्कमई, कुच्छिसि महायसो अरिहा" अर्थात्-जिस समय तीर्थंकर भगवान् माताके गर्भमें आकर उत्पन्न होतेहैं,उस समय यह १४ महास्वप्न सर्व तीर्थंकरमहाराजोंकी मातायें देखतीहैं, वैसेही-त्रिशलामातानेभी १४ महास्वप्न देखेहैं, इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेकोही शास्त्रकार महाराजोंनें च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै, इसीकारणसे समवायांगसूत्रवृत्तिमें देवानंदामाताके गर्भसे त्रिशला माताके गर्भमें आनेको अलग भव गिनकर तीर्थंकर

पनेमें प्रकट होनेकालिखाहै. और 'महापुरुष चरित्र' में तथा 'त्रिषष्ठि-शलाका पुरुष चरित्र' आदिक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी ८२ दिन गये बाद इन्द्रका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्‌को देखकर नमुत्थुणं किया और त्रिशलामाताके गर्भमेंपधराये, जब त्रिशलामाता-ने १४महास्वप्न देखे,तब खास इन्द्रने त्रिशलामाताके पासमें आकर तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, और फजरमें स्वप्न पाठकोंसेभी तीर्थंकर पुत्र होनेका सुनकर सबको तीर्थंकर भगवान्‌के उत्पन्न होनेकी मालूम होगई. इसलिये कल्पसूत्रमें जो नमुत्थुणंका पाठ है, सोभी आसोज वदी १३ के दिन संबंधी है, किंतु आषाढ शुदि६ के दिन संबंधी नहींहै, क्योंकि देखो- 'नमुत्थुणं करके त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये' ऐसा कल्पसूत्रादिमें खुलासालिखाहै, मगर आषाढ शुदी६को आसनप्रकंपनसे नमुत्थुणं किया और फिर उसके बादमें ८२ दिन गये पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये. या ८२दिन तो इन्द्रको विचारकरते चलेगये. वा पूरे ८२ दिन गयेबाद आसोज वदी १३ को फिर आसन प्रकंपनसे त्रिशलामाताके गर्भमेंपधराये. अथवा ८२दिन ठहरकर पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये. ऐसे पाठ किसीभी शास्त्रमें नहींहै. मगर ८२दिन तक तो मालूमभी नहींपडी, परंतु ८२दिन जाने बाद आसन प्रकंपनहोनेसे मालूम पडी, तब नमुत्थुणं किया और उसी रोज पधराये, ऐसे पाठ तो "महापुरुष चरित्र" में तथा "त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र" आदि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रत्यक्ष मिलतेहैं, इसलिये आसोज वदी १३ कोही 'नमुत्थुणं' वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेसे आगम पंचांगीकी श्रद्धावालोंको व श्रीवीरप्रभुकी भक्तिवालोंको यह दूसरा च्यवनरूप कल्याणक मान्य करनाही उचित है, बस ! आसोज वदी १३ कोही नमुत्थुणं करने वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेका मान्यकरो या आषाढ शुदी ६ को नमुत्थुणं करने वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेका खुलासा पूर्वक शास्त्रपाठ बतलावो,व्यर्थ विवाद करनेमें कोई सार नहीं है.

११- श्रीआदीश्वर भगवान्‌के राज्याभिषेकमें तो कोईभी कल्याणकके लक्षण नहीं हैं, मगर गर्भापहारसे गर्भ संक्रमणरूप दूसरे च्यवनमें तो च्यवन कल्याणकके सर्व लक्षण प्रत्यक्ष मौजूदहैं, इसलिये इसका भावार्थ समझे बिनाही राज्याभिषेककी तरह गर्भापहारकोभी कल्याणकपनेका निषेध करना यहभी बे समझ है।

१२– श्री आदीश्वरभगवान् १०८ मुनियोंके साथ 'अष्टापद'पर मोक्ष पधारे सो अच्छेरा कहतेहैं, तोभी उनको मोक्ष कल्याणक माननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती. तैसेही–श्रीवीरप्रभुकेभी देवानंदा माताके गर्भमें आनेसे त्रिशलामाताके गर्भमें जाना पडा. सो अच्छेरारूप कहते हैं, तोभी उनको च्यवनकल्याणक माननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती. इसलिये अच्छेरा कहकर कल्याणकपनेका निषेध करना यहभी बे समझही है.

१३– और श्री मल्लिनाथस्वामि स्त्रीपनेमें तीर्थंकर उत्पन्न हुएहैं, तोभी चौवीश तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पुरुषपनेमें कहनेमेंआतेहैं. तैसेही श्रीवीरप्रभुकेभी छ कल्याणक आचारांग-स्थानांगादि आगमोंमें विशेषतासे खुलासापूर्वक कहेहैं, तोभी 'पंचाशक' में सर्व तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पांच कल्याणक कहेहैं, उसकाभावार्थ समझे विनाही सर्वजिनसंबंधी पांच-कल्याणकोंका सामान्य पाठको आगे करके आचारांग–स्थानांगादि आगमोंमें कहे हुए विशेषतावाले छ कल्याणकोंका निषेधकरना यह भी बे समझका व्यर्थही आग्रह है।

१४–इसतरहसे आगमपंचांगीके अनेक शास्त्रानुसार तीर्थंकर, गणधर,पूर्वधरादि प्राचीन पूर्वाचार्योंके कथनमुजब गर्भापहारको दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपनाप्रत्यक्षसिद्ध होनेसे.श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजने चित्तोडमें छठे कल्याणककी नवीनप्ररूपणाकी, पहिले नहीं थी, ऐसा कहेनाभी बे समझसे व्यर्थही है।

१५–और गर्भापहाररूप दूसरे च्यवनकल्याणकके अतीव उत्तम कार्यको 'सुबोधिका ' टीकामें अतीव निंदनीक कहकरके निंदाकीहै, सोभी भगवान्की आशातनाकारक होनेसे सम्यक्त्वको व संयमको हानीपहुंचानेवालीहै, उसका तत्त्वदृष्टिसे विचारकियेविनाही विद्वान् कहलानेवाले सर्व मुनिमहाराज वर्षोवर्ष पर्युषणापर्वके मांगलिक रूप व्याख्यान समय ऐसी अनुचित बातको वांचते हैं, यह बडीही शर्मकी बात है, भवभीरू आत्मार्थियोंको ऐसा करना कदापि योग्य नहीं हैं। इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय प्रथम भागकी भूमिकामें और इस ग्रंथके उत्तरार्द्धमें अच्छी तरहसे लिखनेमें आयाहै, उनके वांचनेसे सर्व बातोंका निर्णय हो जावेगा.

१६– सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेसंबंधीभी आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति-लघुवृत्ति-नवपदप्रकरण विवरणरूपवृत्ति–दूसरीवृत्ति–श्रावकधर्मप्रकरणवृत्ति-

वंदित्तासूत्रचूर्णि-श्राद्धदिनकृत्यसूत्रवृत्ति-पंचाशकचूर्णि-वृत्ति-विचारामृतसंग्रह-धर्मसंग्रहवृत्ति-संबोधमत्तरी प्रकरणवृत्ति-जयसोमोपाध्यायजी कृत 'ईर्यापथिकी षट्त्रिंशिका विवरण', श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्ति इत्यादि अनेक शास्त्रानुसार श्रीजिनदासगणिमहात्तराचार्यजी पूर्वधर, श्रीहरिभद्रसूरिजी, अभयदेवसूरिजी, हेमचंद्राचार्यजी, देवेंद्रसूरिजी, देवगुप्तसूरिजी, वगैरह सर्व गच्छोंके प्राचीन पूर्वाचार्योंने सामायिक विधिमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करके स्वाध्याय, ध्यानादि धर्मकार्य करनेका बतलाया है, यहीबात जिनाज्ञानुसारहै. पहिले सर्व गच्छोंमें इसीप्रकारसेही सामायिकविधि करतेथे, मगर पीछेसे कितनेही चैत्यवासियोंने अपनी मतिकल्पना मुजब प्रथम इरियावही पीछेकरेमिभंते स्थापन करनेका आग्रहचलायाथा, उनकीपरंपरामुजब अबीभी कितनेकमहाशय प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करनेकेलिये अन्य कोईभी प्रकट अक्षरवाले शास्त्रप्रमाण न मिलनेसे महानिशीथ-दशवैकालिकादिकके अधूरे २ पाठोंसे संबंधके विरुद्ध अर्थ करके सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते ठहरातेहैं, परंतु उससे अनेक दोष आते हैं, उसका विचारभी कभी नहीं करते हैं. देखो - विसंवादी शास्त्रोंको व विसंवादी कथन करनेवालोंको शास्त्रोंमें मिथ्यात्वी कहेहैं, इसलिये जैन शास्त्रोंको व पूर्वाचार्योंको अविसंवादी कहनेमें आतेहैं, और आवश्यकचूर्णिआदि अनेकशास्त्रोंमेंसामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावहीके पाठमौजूद होनेपरभी महानिशीथ-दशवैकालिकादिसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेसे सर्वज्ञ शास्त्रोंमें विसंवादरूप यह प्रथमदोषआताहै. और आवश्यक बडी टीका, महानिशीथका उद्धार, दशवैकालिक बडीटीका यह सर्वशास्त्र श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजनें कियेहैं, इसलिये आवश्यक बडी टीकाके विरुद्ध महानिशीथसे प्रथम इरियावही ठहरानेसे इन महाराजके कथनमें विसंवाद आनेरूप यह दूसरा दोषआताहै. आवश्यकादिमें सामायिकके नामसे प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही खुलासा लिखीहै, महानिशीथके तीसरेअध्ययनमें उपधानसंबंधी चैत्यवंदन स्वाध्यायादिकरनेकापाठहै, दशवैकालिककी टीकामें साधुके गमनागमन ( जाने आने ) संबंधी इरियावही करके स्वाध्यायादि करनेका पाठहै, इस प्रकार भिन्न २ अपेक्षा वाले शास्त्रोंके पाठोंके संबंध विरुद्ध होकर अधूरे २ पाठोंसे सामायिकमेंभी प्रथम इरियावही ठहरानेसे शास्त्रोंकी

मर्यादाका भंगहोनेरूप यह तीसरा दोषआताहै. और सर्व गीतार्थपूर्वाचार्योंने महानिशीथादि देखेथे, उन्होंके अर्थकोभी अच्छी तरहसे जानतेथे, तोभी सामायिकमें प्रथम इरियावही नहींलिखी, जिसपरभी अभी महानिशीथसे सामायिकमें प्रथम इरियावही ठहरानेसे उन सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंको महानिशीथके अर्थको नहीं जाननेवाले अज्ञानी ठहरानेका यहचौथादोषआताहै. और सर्वपूर्वाचार्योंने सामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही लिखीहै,उसको उत्थापनकरनेसे सर्व पूर्वाचार्योंकी आज्ञा लोपनेका यह पांचवा दोषभी आताहै. और आवश्यकचूर्णि आदिक सर्व शास्त्रोंके विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेसे आगम पंचांगीके उत्थापनरूप यह छठा दोषआताहै. और खास तपगच्छके श्रीदेवेंद्रसूरिजी,कुलमंडनसूरिजी वगैरहोंनेभी सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासा लिखी है, उसकेभी विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेसे अपने पूर्वज वडील आचार्योंकोभी अवज्ञा करनेरूप यह सातवा दोषभी आताहै. इसप्रकार सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही कहनेका निषेध करके प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेसे अनेक दोष आते हैं, इसका विशेष खुलासा पूर्वक निर्णय शास्त्रोंके संपूर्ण संबंधवाले पाठोंकेसहित इसीग्रंथके दूसरेभागकी पीठिकाके पृष्ठ८७से११२ पृष्ठतक और इस ग्रंथमेंभी पृष्ठ ३१० से ३२९ पृष्ठ तक छपगयाहै. वहां सर्व शंकाओंका खुलासा समाधान करनेमें आया है, इसलिये आत्मार्थी भव्य जीवोंको जिनाज्ञानुसार, सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार, प्राचीन अनेक शास्त्रानुसार, तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी भाव परंपरानुसार सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनाहीयोग्यहै, और प्रथमइरियावही करनेकी अभी थोडेकालकी गच्छकीरूढीके आग्रहको छोडनाही श्रेयरूप है। इस बातको विशेष तत्वज्ञ जन आपही विचार लेंगे.

जिन २ महाशयोंको इतना बडा संपूर्णग्रंथ बांचनेका अवकाश न होवे; उनमहाशयोंको इसग्रंथके प्रथमभागकी भूमिका और दूसरे भागकी पीठिकाको अवश्यही बांचनाचाहिये. मैने भूमिका-पीठिकामें अन्य स्थातें नहींलिखी,किंतु इसग्रंथकासार और सर्वशंकाओंका थोडेसेमें समाधानमात्रही लिखाहै. इसलिये भूमिका-पीठिका बांचनेवालोंको ग्रंथकासार अच्छीतरहसे मालूम होसकेगा. इतिशुभम्.

## इसग्रन्थके उत्तरार्द्धके तीसरे खंडकी– जाहिर खबर.

१-इसग्रंथके उत्तरार्द्धके तीसरेखंडमें आगमादि अनेकप्राचीन शास्त्रानुसार,व चंद्रगच्छ,वडगच्छ, खरतरगच्छ,तपगच्छ,अंचलगच्छ, पायचंदगच्छादि सर्वगच्छोंके पूर्वाचार्योंके बनायेग्रंथानुसार श्रीवीर प्रभुके छ कल्याणक मान्यकरनेका अच्छी तरहसे सिद्ध करके बतलाया है. और शांतिविजयजीने ' जैनपत्र'में, विनयविजयजीने 'सुबोधिका'में, कांतिविजयजी-अमरविजयजीनें ' जैनसिद्धांत सामाचारी' में, श्रीआत्मारामजीने ' जैन तत्त्वादर्श'में, धर्मसागरजीनें 'कल्पकिरणावली ' ' प्रवचन परीक्षा ' वगैरहमें जो जो छ कल्याणक निषेध संबंधी शंकायें की हैं. और शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझे बिनाही अधूरे२ पाठ लिखकर उनके खोटे२ अर्थ करके भोले जीवोंको उलटा मार्ग बतलानेकी कौशिश की है, उन सर्वबातोंका समाधान सहित निर्णय इसमें लिखनेमें आया है ।

२–और श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजसे वसितवासी–सुविहित–खरतर बिरुदकी शुरूयात हुयीहै,इसलिये श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज खरतर गच्छमें हुए हैं, यह बात प्राचीनशास्त्रानुसार तथा तपगच्छके पूर्वाचार्योंके बनाये ग्रंथानुसार सिद्ध करके बतलायाहै । और कोई महाशय श्रीजिनदत्त सूरिजी महाराजसे संवत् १२०४में खरतरगच्छकी शुरूयातहोनेका कहतेहैं, सोभी सर्वथा असत्य है. क्योंकि–इन महाराजसे सं. १२०४में खरतरगच्छकी शुरूयात होनेका कोईभी कारण नहीं हुआ है. व्यर्थ झूठे आक्षेप करने बडी भूलहै, देखो-१२०४में तो खरतर गच्छकी तीसरी शाखा हुईहै.इस बातका अच्छीतरहसे खुलासा इसग्रंथमें करनेमें आयाहै.

३–और जैनशास्त्रोंकी यह आज्ञा है, कि–यदि अपनी गच्छ परंपरामें ३-४ पेढीके आगेसेही शिथिलाचार चला आता होवे, तो क्रिया उद्धार करनेवाले दूसरेगच्छके अन्यशुद्ध संयमीके पासमें क्रिया उद्धार करें. अर्थात्– उनके शिष्य होकरके शुद्ध संयम पालें, उससे पहिलेकी शिथिलाचारकी अशुद्ध परंपरा छुटकर, क्रिया उद्धार करवानेवाले गुरुकीशुद्धपरंपरा मानीजावे. देखो जैसे–श्रीआत्माराम जीने ढूंढियोंके झूठेमतको छोडकर तपगच्छमें दीक्षाली है. इसलिये यद्यपि पहिलेढूंढियेथे तोभी उनकीपरंपरा ढूंढियोंमेंनहींलिखी जावे; किंतु तपगच्छमेंही लिखीजावे. तथा कोई शिथिलाचारी यति अपने गुरु व गच्छको छोडकर अन्यगच्छवाले शुद्धसंयमीके पासमें क्रिया

उद्धारकरें(फिरसे दीक्षालेवे)तो उनकी यतिपनेकी अशुद्धपरंपरा छुटकर जिसगुरुके पासमें क्रिया उद्धार किया होगा, उन्हीं गुरुकीशुद्ध परंपरा चलेगी ॥ इसी तरहसे श्रीवडगच्छके जगचंद्रसूरिजी महाराजने अपनेको व अपनी गच्छ परंपराको शिथिलाचारी अशुद्ध जानकर छोडदियाथा और श्रीचैत्रवालगच्छके शुद्ध परंपरावाले शुद्ध संयमी श्रीदेवभद्रोपाध्यायजीके पासमें क्रिया उद्धार कियाथा,अर्थात्-उनके शिष्य होकर शुद्ध संयमी बने थे. और उसके बादमें बहुत तपस्या करनेसे 'तपा' बिरुद मिलाथा, उस रोजसे इन महाराजकी समुदायवाले तपगच्छके कहलाये गये. इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरिजीमहाराजने और श्री क्षेमकीर्त्तिसूरिजी महाराजने श्रीजगचंद्रसूरिजीमहाराजकी पहिलेकी शिथिलाचारकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा लिखना छोडकर; इनमहाराजकी चैत्रवाल गच्छकी शुद्ध परंपरा अपनी बनाई 'धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति' में और 'श्रीबृहत्कल्प भाष्य वृत्ति' में लिखीहै. यही शुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार है, मगर पहिलेकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार नहींहै.यह बात अल्पज्ञभी अच्छी तरहसे समझसकताहै. जिसपरभी अभी वर्तमानिक तपगच्छके विद्वान् मुनिमंडल देवेंद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी लिखी हुई जिनाज्ञानुसार चैत्रवालगच्छकी शुद्ध परंपराको छोड देते हैं.और जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी वडगच्छकी अशुद्ध परंपराको लिखते हैं. यह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है. इन सर्व बातोंका विस्तार पूर्वक खुलासा इस ग्रन्थके उत्तरार्द्धमें लिखा गयाहै. सोभी छपकर तैयार होगयाहै, इस पूर्वार्द्धके प्रकट हुएबाद, थोडे समयसे उत्तरार्द्धभी प्रकट होगा, सो संपूर्ण तया बांचनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा.

## विद्वान् सर्व मुनिमंडलसे विनति.

श्रीमान्- विजयकमलसूरिजी, विजयधर्मसूरिजी, विजयनेमिसूरिजी, बुद्धिसागरसूरिजी, विजयवीरसूरिजी, विजयनीतिसूरिजी विजयसिद्धिसूरिजी, आनंदसागरसूरिजी, उ०इन्द्रविजयजी, प्र० श्री कांतिविजयजी-मंगलविजयजी, पं० गुलाबविजयजी- धर्मविजयजी-केशरविजयजी-दानविजयजी-मणिविजयजी- अजितसागरजी, श्री हंसविजयजी-कपूरविजयजी- वल्लभविजयजी-कल्याणविजयजी-लब्धिविजयजी-आनंदविजयजीआदि विद्वान्सर्व मुनिमंडलसेविनति.

आप यह तो जानतेहीहैं, कि-श्रीनिशीथचूर्णिमें वर्षाऋतुमेंही मु-

नियोंको आलोयणालेनेकाकहाहै, और अभी श्रावणादिमहीने बढें. तब पांच महीनोंके दश पक्ष; १५० दिन वर्षाकालके होते हैं, उसमें आयंबिल, उपवास, नवकरवाली गुणने वगैरहसे जितने दिन धर्मकार्य होंगे; उतनेही दिन आलोयणाकी गिनतीमें आवेंगे,इसी तरहसे वर्षी और छमासी तपके दिनोंमें व ब्रह्मचर्य पालने वगैरह कार्योंमेभी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें आते हैं॥ इस हिसाबसे धर्मकार्यमें व कर्म बंधनके व्यवहारमें सूर्यके उदय अस्त (रात्रि दिनके) परिवर्तनके हिसाबसे और अंग्रेजी, मुसलमानी, पारसी, बंगलाकी तारिखोंके हिसाबसेभी आषाढ चौमासीसे जब दो श्रावण होवें: तब भाद्रपद तक, या जब दो भाद्रपद होवे तब दूसरेभाद्रपद तक ८० दिन होतेहैं, उसके ५०दिन कहतेहैं, और जब दो आसोज होवे तब कार्तिक तक-१००दिनहोतेहैं, उसकेभी ७०दिन कहतेहैं. यहबात संसार व्यवहारके हिसावसे, रात्रिदिनके जानेके (समयके प्रवाहके) हिसाबसे, धर्म शास्त्रोंके हिसाबसे, ज्योतिषपंचांगकेहिसाबसे,राज्यनीतिके हिसाबसे, और धर्म-कर्मके अनादि नियमके हिसाबसेभी सर्वथा विरुद्धहै. और अन्य दर्शनियोंके विद्वानोंके सामने जैनशासनको कलंक रूपहै. इसलिये मेहेरवानी करके बहुत समयकी गच्छ परंपराकी रूढीरूप प्रवाहके आग्रहको छोडकर जिनाज्ञाका विचार करके यह अनुचित रीवाजको वगर विलंबसे सुधारनेकी कोशिशकरें. इसके संबंधमें सर्व बातोंका खुलासापूर्वक समाधान इस ग्रंथकी भूमिकाके ४७ प्रकरणोंमें व सुबोधिकादिककी २८ भूलोंवाले लेखमें और इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आयाहै, उसको पूरेपूरा अवश्यवांचे और योग्य लगे उतना सुधाराकरें,पक्षपात झूठाआग्रह शास्त्रविरुद्ध बहुतलोगोंकी समुदाय व गुरुगच्छकी परंपरा हितकारीनहींहै,किंतु जिनाज्ञाही हितकारीहै. परोपदेशकेलिये बहुत लोगबडे कुशल होतेहैं, मगर वैसाही कार्य करनेवाले आत्मार्थीबहुतहीअल्पहोतेहैं, यहभी आपजानतेहीहै.

और सर्वज्ञ शासनमें कर्मबंधन व धर्मकार्यसंबंधी समय २ का व श्वासोश्वासका हिसाब किया जाताहै, उसमें ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन कहनेवाले, यदि कसाई व व्यभिचारी वगैरह पापीप्राणियोंके कर्मबंधन और साधु मुनिमहाराजोंके व ब्रह्मचारी वगैरह धर्मी प्राणियोंके कर्मक्षयकरने संबंधीभी ८० दिनके ५० दिन, व १००दिनके ७०दिन कहेंगे, तबतो-सर्वज्ञ भगवान्के प्रवचनकी व धर्म-कर्मकी अनादिमर्यादा भंग करनेके दोषी ठहरेंगे, अथवा

८०दिनके व १००दिनके धर्म-कर्म समय २ के श्वासोश्वासके हिसाव से सर्वज्ञ भगवान्‌के प्रवचनानुसार अनादिमर्यादा मुजब मान्यकरेंगे, तो-८०दिनके ५०दिन,व १०० दिनके ७० दिन कहनेकाआग्रह झूठाही ठहरजावेगा. यहभी न्यायबुद्धिसे विचारने योग्यहै, विशेष क्या लिखें.

## देव द्रव्य निर्णयः ।

१-वर्तमानिक देवद्रव्यकी चर्चा संबंधी अर्पण बुद्धिसे भगवान्‌को चढाई हुई वस्तु देव द्रव्यमें गिनी जातीहै, यह बात सर्वमान्य है, इसी तरहसे पूजा और आरतीकी बोलीभी अर्पण बुद्धिसे पहिले सेही संघ तरहसे भगवान्‌को चढाई हुई वस्तु हैं, अर्थात्-देवद्रव्यमें जानेका नियम होचुका है, उनको अन्य मार्गमें ले जानेसे विनाकारण संघकी आज्ञा भंगका व भगवान्‌को अर्पण कीहुई वस्तु रूपांतरसे पीछी लेनेका दोष आताहै, इसलिये ऐसा करना योग्य नहीं है।

२-भगवान्‌की पूजा आरतिकी बोली कलेश निवारण करनेके लिये नहींहै, किंतु शुद्ध भक्तिके लिये है, देखो-अपने अनुभवसे यही मालूम होता है, कि-बहुत भाविक जन आज अमुक पर्व दिवस है, मेरी शक्तिके अनुसार आज १०।२० या. १००।२०० रुपये भगवान्‌की भक्तिके लिये देवद्रव्यमें जावें तोभी कोई हरज नहीं है, मगर आज तो भगवान्‌की पहिली पूजा-आरति मैं करूं, तो मेरे कल्याण-मंगल होवे,वर्षभर भगवान्‌की भक्तिमें जावें,इसी निमित्तसे मेरा द्रव्य भगवानकी भक्तिमें लगेगा.तो मेरी कमाईभी सफल होवेगी, और सुकृत कीकमाईवालेभाग्यशालीको आज भगवान्‌की भक्तिका पहिलालाभ मिलेगाऐसाकहनेमेंभीआताहै. इत्यादि शुभभावसेबोलीबोलतेहैं, इस लिये कलेश निवारणकेलिये बोली बोलनेका ठहराना योग्य नहीं है.

औरभी देखो-भगवान्‌केमंदिर बनवाने व प्रतिमा भरवानेमें महान् लाभ कहा है, यह कार्य भक्तिकेलिये धर्म बुद्धिसे करनेकी शास्त्राज्ञा है. तोभी कितनेक बेसमझलोग नामकेलिये या अभिमानसे वा देखादेखीके विरोधभावसे करतेहैं,सो यह अनुचितहै. इसी तरहसे बोली बोलनेका रीवाजभी भगवान्‌की भक्तिके लिये महान् लाभका हेतु है, तोभी कितनेक बेसमझलोग नामकेलिये या अभिमानसे वा देखादेखीके विरोध भावसेबोलतेहैं. उनको देखकर बोलीबोलनेके रीवाजको भक्ति राग छोडकर कलेश निवारणका हेतु ठहराना योग्यनहींहै.

तथा देवद्रव्यकी तरह साधारण द्रव्यकीभी बहुतही आवश्यकताहै, उसमें वे दरकारीका दोष मुनिमंडल व आगेवानोंपरहै. औ-

रभी देव द्रव्य संबंधी सर्व शंकाओंका समाधान व साधारण द्रव्यकी वृद्धिके लिये उपायवगैरह बहुतबातोंके खुलासे समाधान 'देवद्रव्य निर्णय' नामा पुस्तकमें लिखनेमें आवेंगे.

## निवेदन और उपकार.

इसग्रंथकी कोईबात समझमें न आवे, या वांचते २ कोई शंका होवे, तो इस ग्रंथके कर्त्ताको लिखकर खुलासा मंगवानेका सबको हक है, ग्रंथ संबंधी सब तरहका जवाबदार लेखक है.

इस ग्रंथमें अनुमान ३०० शास्त्रोंके प्रमाण बतलाये गयेहैं, इस ग्रंथके बनवाले संबंधी शास्त्रोंके संग्रह करने वगैरहमें, श्रीमान् जिनयशसूरिजीमहाराज, श्रीमान् शिवजीरामजीमहाराज, श्रीमान्जिन चारित्रसूरिजीमहाराज, श्रीमान् कृपाचंद्रसूरिजीमहाराज, पन्यासजी श्रीमान् केशरमुनिजीमहाराज, पं० श्रीमान्गुमानमुनिजीमहाराज और कलकत्तानिवासी उ. श्रीमान्जयचंद्रजीगणि व रायबहादुर बद्रीदास जीजौहरीवगैरहोंने जो जो मदतदीहै, उनका मैं उपकार मानता हूं.

संवत् १९७८ वैशाखशुदी ३. हस्ताक्षर मुनि–मणिसागर.

## बिनाकिंमतभेटसे पुस्तक मिलनेके नाम व स्थान.

यहग्रन्थ एकहजार पृष्ठकाबडाहोनेसे दो विभागमें प्रकटकियाहै.

१ बृहत्पर्युषणा निर्णय पूर्वार्द्ध, प्रथम–दूसरा खंड.

२ बृहत्पर्युषणा निर्णय उत्तरार्द्ध, तीसरा खंड.

३ लघुपर्युषणा निर्णयका प्रथम अंक.

४ प्रश्नोत्तर विचार. ५–६–७ प्रश्नोत्तर मंजरीके १–२–३ भाग.

८–९ हर्षहृदय दर्पण १–२ भाग. १० आत्मभ्रमोच्छेदन भानुः.

## यह ग्रन्थभी छपनेवाले हैं.

१ देवद्रव्यनिर्णय. २ न्यायरत्न समीक्षा. ३ प्रवचनपरीक्षा निर्णय.

---

१ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० श्रीजैनश्वेतांबर मित्रमंडल केनिंगस्ट्रीट नं. २१, मु०–कलकत्ता.

२ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० बडा उपाश्रय देश–मारवाड, मु०—बीकानेर.

३ श्रीजिनदत्तसूरिजी ज्ञानभंडार, ठे० गोपीपुरा–शीतलवाडी देश–गुजरात, मु०—सुरत.

४ जौहरी माळूमलजी धनपतसिंहजी भणशाली, सुंदरबील्डिंग ठे० फतहपुरी, मु०– दिल्ली.

॥ ॐ ॥

श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो नमः

# प्रथम भागकी भूमिका

# पहिले इसको अवश्यही पढिये.

मांगलिक्यके करनेवाले श्रीस्थंभनपार्श्वनाथ जिनेश्वर भगवान् को नमस्कार करके, श्रीजिनाज्ञाके अभिलाषी सर्व सज्जन महाशयोंको निवेदन किया जाता है, कि-जन्म-मरण-रोग-शोक-आधि-व्याधि संयोग-वियोगादि-उपाधियुक्त दुस्तर संसार समुद्रके परिभ्रमणका दुःख निवारण करनेके लिये, आत्महितैषी पुरुषोंको जिनाज्ञानुसार शांतिपूर्वक धर्मकार्य करने चाहिये। जिसमें वर्तमानिक द्रव्य गच्छ परंपरा बहुत समुदायकी देखादेखीकी रूढीको अहितकारी जानकर त्याग करनाचाहिये। और सुधारेके जमानेमें गच्छांतरोंके भेदोंकी भिन्न भिन्न प्रवृत्ति देखकर शंकाशील होकर धर्मकार्योंमें शिथिलता करनामी योग्य नहीं है, किंतु 'मेरा सो सच्चा' का आग्रह छोडकर मध्यस्थ बुद्धिसे गुणग्राही होकरके सत्यकी परीक्षाकरके उसको अंगीकार करना, यही मनुष्य जन्मकी सफलताका कारण है।

यद्यपि खंडनमंडनके विवादमें सत्यासत्यका विचार छोडकर अपनापक्ष स्थापन करनेके लिये शुष्कवाद या वितंडावाद करनेवाले आजकल बहुत लोग देखे जाते हैं. मगर दूसरेकी सत्यबात अंगीकार करके अपना असत्य आग्रहको छोडनेवाले बहुतही थोडे देखनेमें आते हैं. जब दूसरेके पक्षका खंडन करनेके इरादेसे उद्यम करनेमें आता है, तब उसपक्षवालोंकी अनेक शास्त्रोंके प्रमाणसहित युक्तिपूर्वक सत्यबातकोभी छोडकर भोले जीवोंको अपना पक्ष सत्य दिखलानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके संबंध वाले सब पाठोंको छुपाकरके थोडेसे अधूरे २ पाठ लिखते हैं, तथा शास्त्रकारोंके अभिप्राय विरुद्ध उनके अर्थ करते हैं, या शास्त्रीय. बातको झूठी ठहरानेकेलिये कुयुक्तियेंभी लगानेमें उद्यम किया जाता है. अथवा विषय संबंध

छोडकर विषयांतर लेकर निष्प्रयोजन व्यक्तिगत आक्षेप करनें लग जातेहैं. और अपनी या अपनें पक्षकारोंकी विनाप्रसंगही वडाई करनें लगतेहैं। मगर शास्त्रोंमेंतो कहाहै. कि-आत्मप्रदेशगत मिथ्यात्वसेभी प्ररूपणागत मिथ्यात्व अधिक दोषवाला होनेसे अनेक भवभ्रमण करानेवाला होता है।

और अनादिकालसे ११ अंगादिशास्त्रोंको देखकर अनंतजीव संसार परिभ्रमणके दुखःसे मुक्त होगये हैं, और अनंतजीव संसारपरिभ्रमणके दुःखको वढानेवालेभी होगये हैं। इसका आशय यही है कि, अतीव गहनाशयवाले, अपेक्षा गर्भित शास्त्रकारोंके अभिप्रायको समझकर वर्ताव करनेवाले तो मुक्तिगामी होते हैं, और शास्त्रकारोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर शब्दमात्रके आग्रहमें पडकर विवादकरनेवाले संसारगामी होते हैं। मगर जो आत्मार्थी होते हैं, वो तो शब्द मात्रके विवादको छोडकर तात्पर्यार्थ तरफ दृष्टि करते हैं, और जो आग्रही होते हैं वो तात्पर्यार्थको छोडकर शब्दमात्रके विवादको विशेष वढाते हैं। इसीही कारणसे रागद्वेषादि भाव शत्रुओंको हटानेवाला श्रीवीतराग सर्वज्ञ भगवान्का कथन किया हुआ अविसंवादी शांतिप्रिय श्रीजैनशासनमेंभी अभी विसंवादरूपी विरोध भावको स्थान मिलगया है।

और पहिले तो सर्व तीर्थंकर महाराजोंके जितने गणधर होतेथे उतनेही गच्छ [ साधु समुदायकी ओलखान ] होतेथे और पीछे भी प्रभावकाचार्योंकी वहुत समुदाय होनेसे कुल-गण-शाखा वगैरह होतेथे,मगर सबकी प्ररूपणा और क्रिया एक समान होनेसे संपशांतिसे मिलते हुए आत्मकल्याण करतेथे,उस समय विरोधी प्ररूपणाके अभावसे किसीकोभी कोई तरहकी शंका उत्पन्न होनेका कारण या अपने गच्छके आग्रहका कारण नहींथा, मगर श्रीवीरप्रभुके निर्वाणबाद पडताकाल होनेसे कितनेक शिथिलाचारी चैत्यवासी होगये, उन्हीसे गच्छोंका आग्रह और भिन्नभिन्न प्ररूपणा विशेष होने लगी तबसेही शास्त्रोक्त जिनपूजा विधिमें कुछ अविधिभी होगई, और जैन पंचांगके विच्छेद होनेपर जैनसमाज लौकिक टिप्पणा माननें लगा, उसमें श्रावणादिभी महीने बढतेहैं। उस मुजब वर्तावशुरू किया, तबसे महामांगल्यकारी शांतिमय अतीवउत्तम पर्युषणा जैसे पर्व आराधनकरनेमेंभी भेद पडगया और शासन नायक श्रीवर्द्धमानस्वामीके छ कल्याणक नहीं माननें वगैरह कितनीही वातोंका विवाद

उपस्थित होगया. उसके विषयमें आगे लिखनेमें आवेगा, मगर इस जगह तो हम केवल पर्युषणा संबंधी थोडासा लिखतेहैं.

जैन पंचांगके अनुसार जब वर्ताव करनेमें आताथा, तब पर्युषणा करनेसंबंधी " अभिवड्ढियंमि वीसा, इयरेसु सवीसइ मासो" इत्यादि निशीथ भाष्य,चूर्णि, बृहत्कल्प भाष्य,चूर्णि,वृत्ति, पर्युषणाकल्प निर्युक्ति,चूर्णि,वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमें खुलासा लिखा है, कि, आषाढ चौमासीसे वर्षाऋतुमें जीवाकुलभूमि होनेसें जीवदयाके लिये मुनियोंको विहार करनेका निषेध और वर्षाकालमें एक स्थानमें ठहरना, उसका नाम पर्युषणाहै। इसलिये जब अधिक महीना होवे तब उसको तेरह [ १३ ] महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे २० वें दिन प्रसिद्ध पर्युषणा करना। और जिस वर्षमें अधिक महीना न होवे, तब उसको १२महीनोंका चंद्रवर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन प्रसिद्ध-पर्युषणा करना [ वर्षाकालमें रहनेका निश्चय कहना ] उसीमेंही उसीदिन वार्षिक कार्य और उसका उच्छव किया जाता है, यह अनादि नियमहै.इसलिये निशीथभाष्य,चूर्णि,पर्युषणा कल्पनिर्युक्ति,चूर्णि, जीवाभिगमसूत्रवृत्ति, धर्मरत्नप्रकरणवृत्ति, कल्पसूत्रमूल और उसकी सर्व टीकाओंमें संवच्छरी शब्दकोभी पर्युषणा शब्दसे व्याख्यान कियाहै,और प्रसिद्ध पर्युषणाकरनेके दिनसे भिन्न [अलग]वार्षिक कार्योंका दिन कोईभी नहीं है, किंतु एकही है, इसीको पर्युषणा पर्व कहो, संवच्छरीपर्व कहो, सांवत्सरिकपर्व कहो या वार्षिकपर्व कहो, सबका तात्पर्य एकही है। और कारणवश " अंतरा वि य से कप्पइ, नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणा वित्तए " इत्यादि कल्पसूत्र वगैरह शास्त्र पाठोंके प्रमाणसे आषाढ चौमासीसे ५०वें दिन पहिले तो पर्युषणा करना कल्पताहै, मगर ५०वें दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करके आगे पर्युषणा करना नहीं कल्पताहै और५०वें दिनतक पर्युषणाकरनेको ग्रामनगरादि योग्यक्षेत्र न मिलसके तो, जंगलमेंभी वृक्ष नीचेभी अवश्यही पर्युषणाकरनाकहाहै. और अभिवर्द्धितवर्षमें२०दिने तथा चंद्रवर्षमें५०दिने पर्युषणा न करे और विहार करे तो "छकाय जीव विराहणा"इत्यादि स्थानांगसूत्रवृत्तिवगैरह शास्त्रपाठोंसे छकायके जीवोंकी विराधना करनेवाला. आत्मघाती, संयम और जिनाज्ञाको विराधन करनेवाला कहा है। यह नियम जैन पंचांगानुसार पौष और आषाढ बढताथा तब चलताथा, मगर जबसे जैन पंचांग

विच्छेद हुआ, तबसे लौकिक टीप्पणा मुजब मास-पक्ष-तिथी-वार-नक्षत्र-मुहूर्त्तादि व्यवहार जैन समाजमें शुरू हुआ. उसमें श्रावण भाद्रपदादि मासभी बढने लगे.तब जैनसंघने श्रीवीर निर्वाणसे९९३ वर्षे अधिक महीने वाला वर्षमें २०दिने पर्युषणापर्व करनेकी मर्यादा बंध करी और अधिक महीना हो,चाहे न हो, तो भी ५०वें दिन पर्युषणापर्वमें वार्षिक कार्य करनेका नियम रक्खाहै. सो "जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाऽऽषाढ एव वर्धते नान्ये मासास्तट्टिप्पणकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा युक्तेति वृद्धाः"यह पाठ कल्पसूत्रकी सुबोधिकादिसर्व टीकाओंमें प्रसिद्धही है। उसके अनुसार श्रावणबढेतो दूसरेश्रावणमें और भाद्रपदबढेतो प्रथम भाद्रपदमें ५०दिने पर्युषणापर्वका आराधन करना जिनाज्ञा है। और पहिले मास वृद्धिके अभावसे५०वें दिन पर्युषणा करतेथे, तब पर्युषणाकेबाद कार्तिक तक ७० दिन ठहरतेथे,मगर जब मास वृद्धि होनेपर २० दिने पर्युषणा करतेथे,तब तो पर्युषणाके पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेथे,यहबात निशीथभाष्य-चूर्णि-पर्युषणाकल्पचूर्णि,वृहत्कल्पचूर्णि,वृत्ति-जीवानुशासनवृत्ति गच्छाचारपयन्नवृत्ति,स्थानांगसूत्रवृत्ति, वगैरह अनेक शास्त्र पाठोंसे सिद्ध होतीहै। और वर्तमानमें श्रावण, भाद्रपद तथा आश्विन बढनेपरभी५०दिने पर्युषणापर्व करनेसे पिछाडी कार्त्तिक तक १०० दिन ठहरतेहैं। यह भी कल्पसूत्रकी सर्व टीकाओंके अनुसार होनेसे जिनाज्ञानुसारही है, इसलिये इसमें किसी प्रकारका दोष नहीं है।

इस ऊपरके शास्त्रीय लेखपर दीर्घ दृष्टिसे निष्पक्ष होकर मध्यस्थ बुद्धिसे विचार किया जावे तो स्पष्ट मालूम हो जावेगा,कि–पर्युषणा पर्व करनेमें जैन टिप्पणानुसार या लौकिक टिप्पणानुसार अधिक मास अथवा कोईभी मास, या कोईभी दिन कभी बाधक नहीं होसकताहै. क्योंकि पर्युषणापर्वकरनेमें५०दिनोंकी गिनतीका व्यवहारिक शास्त्रीय नियम होनेसे पर्युषणा पर्व दिन प्रतिबद्ध ठहरते हैं. किंतु मास प्रतिबद्ध कभी नहीं ठहरसकते। और ५० दिनोंकी गिनतीमें अधिक महीनेके३० दिवस तो क्या मगर एक दिवस मात्रभी गिनतीमें कभी नहीं छुट सकता। जिसपरभी पर्युषणा पर्व–दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपद मास प्रतिबद्ध ठहराना १. अधिक महीनेके ३० दिनोंको बीचमेंसे छोड देना २. बीश दिनोंसे पर्युषणा पर्व करनेकी बातको सर्वथा उडा देना ३. श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढनेसे १००

दिन होनेपरभी उसको ७० दिन कहनेका आग्रह करना ४. सो यह सब बातें सर्वथा शास्त्रकारोंके विरुद्ध हैं.

अब पर्युषणा पर्व करने संबंधी ५० दिनोंकी गिनती करनेमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोड देनेका आग्रह करने के लिये कितनेक लोग शास्त्रविरुद्ध होकर कितनीक कुयुक्तियें करते हैं, उसके विषयमें थोडासा लिखते हैं।

१— कल्पसूत्रादिमें आषाढ चौमासीसे दिनोंकी गिनतीसे ५० वें दिन अवश्यही पर्युषणापर्व (वार्षिक कार्य) करने कहेहैं, उसमें अधिक महीनेका १ दिनमात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता.और ५० वें दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करनानहीं कल्पताहै। जिसपरभी वर्तमानिक कितनेक लोग श्रावण भाद्रपद बढनेपर ८० दिने पर्युषणापर्व करतेहैं, सो शास्त्रविरुद्धहै, इसका विशेष खुलासा इसीही "बृहत्पर्युषणा निर्णय" ग्रंथकी आदिसे पृष्ट २७ तक देखो.

२—अधिकमहीनेके ३० दिन जैनशास्त्रोंमें गिनतीमें नहीं लिये, ऐसा कहते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, अधिक महीनेके ३० दिनोंको दिनोंमें, पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें और युगकी गिनतीमें खुलासापूर्वक गिनेहैं,इसका विशेष खुलासा देखो इसी ग्रंथके पृष्ठ२८ से४८तक

३— अधिकमहीना काल चूलारूप है, सो गिनतीमें नहीं लेना ऐसा कहते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, निशीथचूर्णि, दशवैकालिक बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें अधिक महीनेको काल चूलाकी शिखर रूप श्रेष्ठ, (उत्तम) ओपमादी है, और उसके ३० दिनोंको गिनतीमें भीलिये हैं. इसकाभी विशेष खुलासा देखो इसी ग्रंथके पृष्ठ ४९ से ६५ तक। तथा पृष्ठ ७५ से ९१ तक.

४— पर्युषणाकल्प चूर्णि तथा निशीथ चूर्णिके पाठसे दो श्रावण होवे तो भी भाद्रपदमें पर्युषणापर्वकरनेका ठहरातेहैं, सोभी शास्त्रविरुद्धहै,दोनों चूर्णिके पाठोंमें अधिकमहीना पोष अथवा आषाढ होवें तब उसके३०दिनोंको गिनतीमें लेकर आषाढ चौमासीसे२० वें दिन श्रावणमें पर्युषणा पर्व करना लिखाहै, और अधिक महीना न होवे तब ५० वें दिन भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखा है। और ५० वें दिनको उल्लंघन करनेवालोंको प्रायश्चित्त कहा है, इसलिये दो श्रावण होनेपरभी ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा पर्व करना योग्य नहीं है। और अधिकमासके ३० दिन गिनतीमें छोड देनाभी शास्त्र विरु-

द्ध है. इसकाभी विशेष खुलासा देखो दोनों चूर्णिके विस्तार पूर्वक पाठों सहित इसीग्रंथके पृष्ठ ९१ से १०६ तक.

५—जैन टिप्पणामें अधिकमहीना होताथा तबभी २० वें दिन-श्रावण शुदि पंचमीको पर्युषणा पर्वमें वार्षिक कार्य होतेथे, इसलिये २० वें दिनकी पर्युषणामें वार्षिक कार्य कभी नहीं हो सकते, ऐसा कहनाभी सर्वथा शास्त्र विरुद्धहै, इसकाभी विशेष खुलासा देखो इसीग्रंथके पृष्ठ १०७ से ११७ तक,

६– श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढे तो भी ५० वें दिन पर्युषणापर्व करनेसे शेष कार्त्तिक मास तक १०० दिन होते हैं, जिसपरभी ७० दिन रहनेका आग्रह करते हैं, सो भी शास्त्र विरुद्ध है, ७० दिन रहनेका तो मास वृद्धिके अभाव संबंधीहै,मगर मास वृद्धि होवे तबतो १०० दिन रहना शास्त्रानुसार हैं। इसकाभी विशेष खुलासा इस ग्रंथमें पृष्ठ ११७ से १२८ तक, तथा १७४ से १८५ तक देखो.

७– अधिकमहीना होवे उसवर्षके १३ महीने व एक चौमासेके ५ महीने होते हैं. उतनेही महीनोंके कर्मबंधनभी होते हैं, तोभी उसमें १२ महीनोंके व ४ महीनोंके क्षामणेकरने कहतेहैं. सोभी शास्त्र विरुद्ध है. अधिक महीना होवे तब १३ महीनोंके व ५ महीनोंके क्षामणे करने शास्त्रानुसार हैं; इसकाभी विशेष खुलासा पृष्ठ १३३ से १३६ तक. और पृष्ठ ३६२ से ३७८ तक देखो.

८– अधिक महीनेमें सूर्यचार नहीं होता, ऐसा कहनाभी शास्त्रविरुद्धहै, छ छ महीने१८३ वें दिन, सूर्य दक्षिणायनसे उत्तरायनमें और उत्तरायनसे दक्षिणायनमें हमेशा होता रहता है, उसमें अधिक महीनेके ३० दिनोंमेंभी जैनशास्त्र मुजब या लौकिक टिप्पणामुजबभी सूर्यचार होताहै. इसकाभी विशेष खुलासा देखो इसी ग्रंथके पृष्ठ १३७ से १३९ तक.

९–अधिक महीनेके ३० दिनोंमें देवपूजा, मुनिदान, प्रतिक्रमण वगैरह धर्मकार्य करने, मगर उसके ३० दिनोंको गिनतीमें नहीं लेनेका कहना,सो भी प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्धहै. जितने रोज देवपूजादि धर्मकार्य किये जावेंगे, उतने दिन अवश्यही गिनतीमें लिये जावेंगे, और जैसे मुनिदानादि कार्य दिन प्रतिबद्धहैं, वैसेही पर्युषणपर्वभी५०दिन प्रतिबद्धहैं. इसकाभी विशेष खुलासा पृष्ठ १४२ से १४३ तक देखो

१० अधिक महिनेमें विवाह आदि शुभकार्य नहीं होते, उसमु-

जब पर्युषणा पर्वभी नहीं हो सकते- ऐसा कहनाभी प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्धहै,मुहूर्त्तवाले विवाहादि तो मलमास, अधिकमास, क्षयमास, १३ महिनोंके सिंहस्थ, अधिकतिथि,क्षयतिथि,गुरुशुक्रका अस्त और हरि शयनका चौमासा वगैरह कितनेही, तिथि-वार-नक्षत्र-मास वगैरह योगोंमें नहीं किये जाते,मगर विना मुहूर्त्तके धर्मकार्य करनेमें तो किसी समयका निषेध नहीं हो सकता.इसी तरहसे पर्युषणा पर्वभी अधिकमासमें,तथा १३महीनोंके सिंहस्थमें,और चौमासेमेंही करनेमें आते हैं। इसमें अधिकमहीना या कोईभी योग बाधक नहीं हो सकता है. इसकाभी विशेष खुलासा पृष्ठ १९३ से २०४ तक देखो.

११- अधिकमहीनेको वनस्पतिभी अंगीकार नहीं करती,ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्ध है, अधिक महीनेके ३० दिन तो क्या परंतु १ दिन मात्रभी वनस्पति कभी नहीं छोड सकती, किंतु हरेक समय प्रत्येक दिवसको अंगीकार करतीहै. इसकाभी विशेष खुलासा इसी ही ग्रंथके २०५ से २१० तक देखो

इत्यादि मुख्य २ बातों संबंधी शास्त्रीय प्रमाण और युक्तिपूर्वक इस प्रथमभागमें अच्छीतरहसे खुलासापूर्वक लिखनेमें आया है.

और इस ग्रंथको पक्षपात रहित होकर संपूर्ण पढनेवाले सज्जनोंको सत्यासत्यकी परीक्षा स्वयं होसकेगी,इसलिये यहांपर विशेष लिखनेकी कोई अवश्यकता नहीं है।

## इस ग्रंथ कारका उद्देश क्या है ?

इस ग्रंथकारका मुख्य उद्देश यहीहै,कि-सबगच्छवाले आपसमें हिलमिलकर संपपूर्वक सुखशांतिसे धर्मकार्य हमेशांकरें,मगर पर्युषणा जैसे अतीवउत्तम धार्मिकशांतिके दिनोंमें अधिक महीनेके३०दिनोंको धर्मकार्योंमें गिनतीमेंसे छोड देनेके लिये तपगच्छके कितनेक मुनिमहाराज जो खंडन मंडनका विषय व्याख्यानमें चलाते हैं, सो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है,और समयकेभी प्रतिकूल होनेसे-कर्मबंधन, कुसंप व शासनहिलना कराने वालाहै. (इसीबातका विशेष निर्णय इसी ग्रंथमें अच्छी तरहसे लिखा गया है ) उसको ( इस ग्रंथके संपूर्ण बांचे बाद ) अवश्यही बंध करना योग्य है.

## पक्षपात रहित ग्रंथकी रचना.

"पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु। युक्तिमद्वचनं यस्य,तस्य कार्यः परिग्रहः ॥१॥" इत्यादि श्रीहरिभद्रसूरिजी जैसे महापुरुषोंके न्यायानुसार पक्षपात रहित होकर आगम पंचांगी सम्मत युक्तिपू-

वैक खरतरगच्छ,तपगच्छ,अंचलगच्छादिसर्व गच्छवालोंके शास्त्र वा क्योंका संग्रह इसग्रंथमें करनेमें आया है। मगर अमुक गच्छवालेके अमुक आचार्यके वाक्य हमको मंजूर नहीं, ऐसा एकांत आग्रह किसी जगहभी करनेमें नहीं आया.और शास्त्रविरुद्ध व युक्ति बाधित वाक्य तो किसीगच्छवालेकाभी मान्य करना योग्य नहीं. यह बात सर्व जन सम्मतहीहै, वोही न्याय इस ग्रंथमें रक्खा गया है. इसलिये पाठकगणकोभी किसी गच्छ समुदायका पक्षपात न रखकर अवश्यही इस ग्रंथको संपूर्ण अवलोकन करके सार निकालना चाहिये.

इस ग्रंथका लेखक मैं खास संसारीपनेमें तपगच्छका वीसापोरवाल श्रावकथा,मगर उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके पास श्रीसिद्धक्षेत्र (पालीताणा) में विक्रम संवत् १९६० वैशाख शुदी २ को खरतरगच्छमें दीक्षा अंगीकार की,तो भी दोनों गच्छोंके पूर्वाचार्योंपर तथा वर्तमानिक मुनिमहाराजोंपर पूज्यभाव था, और है भी। मगर जिस२अंशमें शास्त्र विरुद्ध होकर परंपराके बहानें जिस२बातोंका झूठाही आग्रह किया गयाहै,उन२बातोंकी आलोचना करके शास्त्रानुसार सत्य बातें जनसमाजमें प्रकट करनी, यह मेरा खास कर्तव्यही समझ कर मैने इस ग्रंथमें इतना लिखाहै। इसमें किसीको पक्षपात न समजना चाहिये. और किसीको नाराज होनेकाभी कोई कारण नही हैं। वर्तमानिक समयके अनुसार परंपराकी अंधरूढीको त्यागना और सत्यको ग्रहण करना, सब सज्जनोंको प्रिय है। और समय बदलता जाता है, तथा संपसे शासनोन्नतिके कार्य करनेकी बहुत जरूरत है, इसलिये कुसंप बढानेवाला पर्युषणाके व्याख्यानमें आपसका खंडन मंडन चलाना योग्य नहीं है. विशेष दूसरे, तीसरे और चौथे भागमें अनुक्रमसे लिखनेमें आवेगा।

## क्षमा याचना तथा अपनी भूल स्वीकार.

इसग्रंथकी रचना करते समय मेरी अल्पवय व अल्प अभ्यास होनेसे, इसग्रंथमें-लेखक दोष, भाषादोष, दृष्टिदोष, पुनरुक्ति दोष, प्रेसदोष व शास्त्रीय पाठोंकी विशेष अशुद्धताके दोषोंकी पाठक गण अवश्यही क्षमा करेंगे,तथा हंसकी तरह दोष त्यागकर सत्य २ सार ग्रहण करेंगे, और सुधारकर बांचेगे; दूसरी आवृत्तिमें इन सर्व दोषोंका संशोधन अच्छी तरहसे करनेमें आवेगा.

और सुबोधिका,दीपिका तथा किरणावली आदिकमें शास्त्रविरुद्ध जो जो बातें लिखी हैं, उन्हीं सर्व बातोंका निर्णय इस ग्रंथमें लिखा

गयाहै.उसकोसमझकर उनकेपक्षके अनुयायीविद्वान् पुरुषोंको उनकी सब भूलोंको क्रमशः अवश्यही सुधारना योग्य है,तथा इस ग्रंथमेंभी जो कोई बात शास्त्र विरुद्ध देखनेमें आवे, तो जरूर मेरेको लिख भेजना. लिखने वालेका उपकार मानकर अपनी भूलको अवश्यही स्वीकार करूंगा, और दूसरी आवृत्तिमें उसको सुधार लूंगा.

## यह ग्रंथ विलंबसे प्रकट होनेका कारण ।

इस ग्रंथकी रचनाका कारण ग्रंथकी आदिमेंही लिखाहै, तथा सुबोधिका,किरणावलीआदिककी खंडनमंडनसंबंधी भूलोंका कारण तो प्रकटही है। और यह ग्रंथ छपनेपर शीघ्रही प्रकट होने वालाथा. मगर कितनेही महाशयोंका कहनाथा कि-यदि मुनिमंडलकी सभामें, विद्वानोंकी समक्ष,इस विषयका शास्त्रार्थसे निर्णय हो जावे,तो बहुत ही अच्छा होवे,और तीन वर्ष पहिले दो भाद्रपद होनेसे इस विवाद के निर्णय करनेकी चर्चाभी खूब जोरशोरसे चलीथी,तब मैनेभी'मुंबई' से 'पर्युषणा निर्णयका शास्त्रार्थ' करने संबंधी विज्ञापन छपवाकर जाहिर कियाथा. उसपर आनंदसागरजी और शांतिविजयजी लोकलज्जासे हां हां करने लगेथे,तो भी बीचमें व्यर्थही आडी रखातें निकालकर चुप बैठ गये, इसका खुलासा आगे लिखूंगा. और अन्य कोईभी मुनि सभामें निर्णय करनेको तैयार नहीं हुए, इसलिये अब यह ग्रंथ इतने विलंबसे प्रकाशित किया जाता है. यह ग्रंथ एक हजार पृष्ठके लगभग होनेसे, ४ भागोंमें अनुक्रमसे यथा अवसर प्रकट होता रहेगा. और मंगवाने वाले साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका-यति-श्रीपूज्य-ज्ञान भंडार-लायब्रेरी और साक्षर वर्ग सबको बिना किमतसे भेट भेजा जावेगा ।

---

## १-देखिये-एक वहेम ॥

तपगच्छके कितनेक मुनिमहाराजोंने अपनी समाजमें यहभी एक तरहका वहेम ठसा दिया है,कि-'अधिकमहीनेमें विवाह-सादी वगैरह शुभकार्यलोगनहींकरतेहैं,उसीतरह अपनेभी अधिकमहीनेमेंपर्युषणा पर्वादि धार्मिककार्य नहीं हो सकतेहैं', मगर इस बातपर तत्त्व दृष्टि से विचार कियाजावे तो यहभी एकतरहका एकांतआग्रहसे झूठाही वहेमहै,क्योंकि विवाहादि मुहूर्त्तवाले कार्य तो मास,पक्ष,तिथि ,वार नक्षत्रादि देखकर, वर्ष छ महीने आगे पीछेभी करते हैं. परंतु बिना मुहूर्तके लोकोत्तर धर्मकार्य तो नियमित दिवससे आगेपीछे कभीनहीं

हो सकतेहैं,इसलिये लौकिक वालेभी मुहूर्त्त वाले कार्य नहीं करते,मगर बिना मुहूर्त्तके दान, पुण्य,जप, तप परोपकारादि तो विशेष रूपसे करनेके लियेही अधिकमहीनेको 'पुरुषोत्तमअधिकमास',कहते हैं,उसकी कथाभी सुनते हैं और सिंहस्थमें नाशिकादि तीर्थोंमें यात्राका मेलाभी भरते हैं। इसी प्रकार वर्तमानिक जैन समाजमेंभी मुहूर्त्तवाले कार्य अधिकमहीनेमें नहीं करते हैं. मगर विना मुहूर्त्तवाले पर्युषणापर्वादि धार्मिक कार्य करनेमें कोई तरहकाभी हरजा नहींहै। अधिक महीनेके३०दिनोंको मुहूर्त्तादि कार्योंमें नहींलेते,परंतु विना मुहूर्त्तके(दिवसोंकी संख्यासे प्रतिवद्ध) धार्मिक कार्योंमें लेतेहैं। बस ! इसका मर्म सरल दिलसे न्यायपूर्वक समझ लिया जावे तो अधिकमहीनेमें पर्युषणापर्वादि धर्म कार्य नहीं हो सकतेहैं. ऐसा एकांत आग्रहका झूठा वहेम आपसेही निकल सकता है. इसका विशेष निर्णय इस ग्रंथको वांचने वाले तत्त्वज्ञ विवेकी सज्जन स्वयं कर सकेंगे।

## २-यह वे समझ है, या हठाग्रह है ॥

अधिक महीनेके अभावमें ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखाहै सो५० दिनके अंदर करनेवाले आराधक होतेहैं ऊपरांत करनेवाले तो विराधक होतेहैं. इसलिये५०वें दिनकी रात्रिकोभी किसी प्रकारसेभी उल्लंघन करना नहीं कल्पता है. यह बात जैन समाजमें प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी सिर्फ भाद्रपद शब्दमात्रकोही पकडकर वर्तमानिक दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका आग्रह करतेहैं, मगर उसमें ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होता है, इसका विचार कुछभी करते नहीं हैं।

औरभीइसीतरहसे पर्युषणाके पिछाडीभी हमेशा७०दिन रखनेका एकांत आग्रहकरतेहैं, मगर ७० दिनका नियम अधिकमहीनेके अभावसंबंधीहै, और अधिकमहीना होवे तब तो निशीथचूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि,स्थानांगसूत्रवृत्ति और कल्पसूत्रकी टीकाओंमें १०० दिन रहनेका कहा है। इसलिये ७० दिन संबंधी या १०० दिन संबंधी यथा अवसर दोनों बातें आत्मार्थियोंको मान्य करने योग्य हैं, जिसपरभी १०० दिन संबंधी शास्त्रप्रमाणोंको छोडकर सिर्फ ७० दिनके शब्द मात्रको आगेकरके १०० दिनकी जगहभी ७० दिन रहनेका आग्रहकरतेहैं.इसलिये ऊपरकी दोनों बातों संबंधी शास्त्रीय अपेक्षाकी यह वे समझ है, या समझने परभी हठाग्रह है। इसका विशेष विचार तत्त्वज्ञ पाठकगणको करना चाहिये.

### ३–कहतेहैं मगर करते नहीं, यहभी देखिये–आग्रह !

अधिकमहीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोड़देनेका आग्रहकरनेवाले; जब दो श्रावण होवे तबभी भाद्रपद तक ५० दिन हुए ऐसा कहतेहैं, मगर प्रत्यक्ष प्रमाण व न्यायकी युक्तिसे विचारकर देखा जावे तो यहकहना प्रत्यक्ष प्रमाणसेभी सर्वथा अनुचितही मालूम होता है। देखिये– किसी श्रावक या श्राविकाने आषाढचौमासीसे उपवास करने शुरू किये होवें, उनको बतलाईये दो श्रावण होनेपर ५०उपवास कबतक पूरेहोवेंगे.और८०उपवास कबतक पूरे होवेंगे? इसके जवाबमें छोटासा बालक होगा वहभी यही कहेगा, कि-५० दिनोंके ५० उपवास दूसरे श्रावणमें और ८० दिनोंके ८० उपवास दो श्रावणहोनेसे भाद्रपदमें पूरे होवेंगे। इसीतरह साधुसाध्वीयोंके संयमपालनेमें,तथा सर्व संसारी जीवोंके प्रत्येक समयके हिसाबसे ७।८ कर्मोंके शुभाशुभ बंधन होनेमें और धार्मिक पुरुषोंके धर्मकार्योंसे कर्मोंकी निर्जरा होनेमें व सूर्यके उदय अस्तके परिवर्त्तन मुजब दिवसोंके व्यतीत होनेके हिसाबमें, इत्यादि सर्व कार्योंमें दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन कहते हैं। ५० उपवास दूसरे श्रावणमें, व ८० उपवास भाद्रपदमें पूरे होनेकाभी कहते हैं. और उपवासादिक उपरके तमाम कार्योंमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको बीचमें सामील गिनकर ८० दिन कहते हैं, ८० दिनोंके लाभालाभ-पुण्यपापके कार्यभी प्रत्यक्षमें मंजूरकरतेहैं.ऐसेही दो आश्विनमहीने होनेसे पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिक तक१०० दिन होतेहैं, उसकेभी१००उपवास, व १०० दिनोंके कर्मबंधन तथा धर्मकार्य वगैरह सर्व कार्योंमें १००दिन कहतेहैं.और१००दिनोंको आपभी अपने व्यवहारमेंभी मंजूर करते हैं। उसमें अधिक श्रावणके३०दिनोंको गिनतीमें लेनेकी तरह अधिक आसोजकेभी ३० दिनोंको गिनतीमें मान्य करना कहते हैं. मगर जब दो श्रावण होवे तब भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं, व जब दो आश्विन होवे तबभी पर्युषणाकेबाद कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं, उनोंको अंगीकार करते नहीं. और ८० दिनके ५० दिन, व १०० दिनके ७० दिन कहते हैं. यह जगत विरुद्ध कैसा जबरदस्त आग्रह कहा जावे, इसको विवेकी जन स्वयं विचार सकते हैं।

### ४–कालचूलारूप अधिकमहीना पहिला या दूसरा ?

यद्यपि जैनटिप्पणा विच्छेद है, इसलिये लौकिक टिप्पणा मु-

जब मास,पक्ष,तिथि,वार,नक्षत्रादिक मानतेहैं.मगर जैनशास्त्रतो मौजूदही हैं. इसलिये पर्युषणादि धार्मिक कार्य जैनसिद्धांतोंके मुजबही करनेमें आते हैं। और जैनशास्त्र मुजबही अभी सर्व गच्छवाले अधिक महीनेको कालचूला कहतेहैं। किंतु कितनेक प्रथम महीनेको कालचूला कहतेहैं, मगर प्रवचनसारोद्धारसूत्रवृत्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति,चंद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति,लोकप्रकाश, ज्योतिषकरंडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रप्रमाणोंसे दूसरा अधिकमहीना कालचूलारूप ठहरताहै.देखिये—"सट्ठीए अईयाए, हवई हु अहिमासो जुगद्धंमि। बावीसे पव्वसए, हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥ १ ॥ इत्यादि सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिके अनुसार ६०पर्व (पक्ष)के३०महीने व्यतीत होनेपर३१वा महीना दूसरा पौष अधिक होताहै,और १२२ पक्षके ६१ महीने जानेपर कालचूला रूप दूसरा आषाढअधिक होताहै.उसी कालचूलारूप दूसरे अधिक आषाढ महीनेमेंही चौमासीप्रतिक्रमणादि धार्मिककार्य सर्व गच्छवालोंके करनेमें आते हैं। और अधिक पौष महीने व अधिक आषाढ महीनेके दिनोंकी गिनतीसहितही ६२ महीने, १२४ पक्ष, १८३० दिन और ५४९०० मुहूर्तोंके पांच वर्षोंका एक युग शास्त्रोंमें कहा है। इस लिये कालचूलारूप अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें नहीं आते १, तथा कालचूलारूप अधिक महीनेमें चौमासी प्रतिक्रमणादि धार्मिक कार्यनहीं हो सकते २, और मासवृद्धि दो महीने होनेसे प्रथम महीनेको कालचूलाकहना ३, यह सर्व बातें सर्वथा शास्त्रविरुद्धहैं।

## ५– पूर्वापर विसंवादी ( विरोधी ) कथन ॥

जोलोग जिसअधिकमहीनेको कालचूलाकहकर गिनतीमेंलेनेका व पर्युषणपर्वादि धर्मकार्यकरनेकानिषेधकरतेहैं,वोहीलोग उसीकालचूलारूप दूसरे अधिकआषाढको गिनतीमेंलेकर चौमासीप्रतिक्रमणादि सर्वकार्य आप करतेहैं. जिसपरभी मुंहसे कालचूलारूप अधिकमहीनेको गिनतीमें नहीं लेना तथा उसमें पर्युषणा व चौमासी आदि धर्मकार्य नहींकरनेका कहतेहैं. और कालचूलारूप अधिक महीनेको गिनतीमें लेकर धर्मकार्यकरनेवालोंको दोषबतलातेहैं. सो देखो-एक जगह कालचूलारूप अधिकमहीना गिनतीमें छोडतेहैं. दूसरी जगह उसीकोही खास आप गिनतीमें लेकर चौमासीआदिधर्म कार्य करते हुए अंगीकारकरतेहैं. और फिर दूसरे गिनतीमेंलेने वालोंको दोषभी बतलातेहैं.यह तो "मम वदनेजिव्हा नास्ति"की तरह कैसा पूर्वापर सर्वथा असंगतरूप विसंवादी कथन है. सो भी विचारने योग्य है।

## ६-कालचूला शिखररूप है, या चोटीरूप है ?

अधिकमहीनेको निशीथचूर्णि आदि शास्त्रोंमें शिखररूप कालचूलाकहाहै और दिनोंकी गिनतीमेंभी लियाहै, जिसपरभी कितनेक महाशय दिनोंकी गिनतीमें निषेध करनेके लिये चोटीरूप कहतेहै. और 'जैसे पुरुषके शरीरके मापमें उसकी चोटीकी लंबाईका माप नहीं गिना जाता, तैसेही अधिकमहीना कालपुरुषकी चोटीसमान होनेसे उसीके ३० दिनोंको प्रमाण गिनतीमें नहीं लिये जाते' ऐसा दृष्टांत देतेहैं,सोभी सर्वथाशास्त्र विरुद्धहै,क्योंकि पुरुषकी ऊँचाईकी गिनतीमें उसकीचोटी १-२ हाथलंबी होवे तोभी कुछभी गिनतीमें नहीं लीजाती,उससेउसका प्रमाणभीकुछ नहींवढसकता,मगर जैसे-देवमंदिरोंके शिखर व पर्वतोंके शिखर प्रत्यक्षपणे उनकी उचाई की गिनतीमें आते हैं, उसीसे उन्होंकी उंचाईका प्रमाणभी बढजाता है. तैसेही अधिकमहीनेको कालचूला कहा है, सो शिखररूप होनेसे गिनतीमें आता है, उससे उस वर्षका प्रमाणभी १२ महीनोंके २४ पक्षोंके ३५४ दिनोंकी जगह, १३ महीनोंके २६ पक्षोंके३८३ दिनोंका होता है,और मास वृद्धिके कारण चंद्र वर्षकी जगह अभिवर्द्धित वर्ष भी कहा जाता है. इसलिये शिखरकी जगह घासरूप चोटी कह करके अधिकमहीनेको दिनोंकी गिनतीमें लेनेका निषेध करना सो " करे माणे अकरे " जमालिकी तरह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है।

## ७-अधिकमहीना गिनतीमें न्यूनाधिकहै, या बरोबरहै ?

जैनसिद्धांतोंके हिसावसे तो जैसे १२ महीनोंके सर्वदिन धर्मकार्योंमें बरोबर हैं, तैसेही अधिकमहीना होनेसे१३ महिनोंकेभी सर्वदिन बरोबर ही हैं। इसमें न्यूनाधिक कोईभी महीना नहीं है, और पापी प्राणियोंके कर्मोंकाबंधन होनेमें व धर्मीजनोंके कर्मोंकी निर्जरा होनेमें एक समयमात्रभी व्यर्थ खाली नहीं जाता है. और समय,आवलिका,मुहूर्त्त दिन,पक्ष,मास,वर्ष,युग,पल्योपम,सागरोपमादि कालमानमेंसे १समयमात्रभी गिनतीमें कमी नहीं छूटसकता, जिसपरभी धर्म कार्योंमें ३० दिनोंको गिनतीमें छोड देनेका कहते हैं,या अधिक महीनेके दिनोंको तुच्छही समझते हैं, सो सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध है.

## ८ - अधिकमहीना नपुंशकहै, या पुरुषोत्तमहै ?

जैसे-ब्रह्मचारी उत्तम पुरुष समर्थ होनेपरभी परस्त्री प्रति नपुंशक समान होता है, तैसेही-लौकिक रूढीसे विवाह सादीवगैरह

आरंभवाले या मुहूर्तवाले कार्य करनेमें तो अधिकमहीनेको नपुंशक समान कहतेहैं.मगर तोभी दिनोंकीगिनतीमें तो बराबरलेतेहैं। और निरारंभी व विना मुहूर्त्तवाले दान,पुण्य,परोपकार,जप,तपादि कार्य करनेमें तो अधिक महीनेको 'पुरुषोत्तम अधिक मास' कहा है, सो बात प्रकटही है.इसलिये जैनसिद्धांतोंके हिसावसे या लौकिक शास्त्रोंके हिसाबसेभी अधिक महीनेको दिनोंकी गिनतीमें निषेध करते हैं,सो शास्त्रीय दृष्टिसे व युक्ति प्रमाणसे या दुनियाके व्यवहारसेभी सर्वथा विरुद्ध है । इसको विशेष पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं

## ९–दूसरे आषाढमें चौमासी करनेका क्या प्रयोजनहै ?

भो देवानुप्रिय ! चौमासीप्रतिक्रमणादि पर्वकार्य ग्रीष्मऋतुपूरी होनेपर वर्षाऋतुकीआदिमें किये जाते हैं,और ज्येष्ठ व आषाढमें ग्रीष्मऋतु कही जाती है.इसलिये जब दो आषाढ होवे; तब उन दोनों आषाढमहीनोंको ग्रीष्मऋतुमें गिने जाते हैं.यह बात प्रत्यक्ष प्रमाणसे जगजाहिरहीहै,और जैनसिद्धांतानुसार तो दूसरे आषाढ शुदी पूर्णिमाका हमेशा क्षय होता है. इसलिये दूसरे आषाढ शुदी१४को पांच वर्षोंका एक युग पूरा होताहै,उसी रोज ग्रीष्मऋतुभी पूरी होतीहै, तथा पांचवा अभिवर्द्धितवर्षभी उसीरोज पूरा होताहै.और १ युगमें सुर्यके दक्षिणायन उत्तरायणके दशअयनभी १८३०दिनोंसे उसीदिन पूरे होतेहैं. इसलिये उसी दिन दूसरे आषाढ शुदी१४ को चौमासी प्रतिक्रमणादि कार्य करनेकी अनादि मर्यादा है । और प्रथम आषाढ ग्रीष्मऋतुमें होनेसे वहां ग्रीष्मऋतु, युग,वर्ष,अयन, वगैरह पूरे नहीं होते, व प्रथम आषाढमें वर्षाऋतुभी शुरू नहीं होती,इसलिये प्रथम आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमणादि पर्वके कार्य करनेमें नहीं आतेहैं और शास्त्रीय हिसावसे श्रावण वदी१को (गुजरातदेशकी अपेक्षासे आषाढ वदी १ को ) युगकी, वर्षकी और वर्षाऋतुकी शुरूआत होती है. इसलिये उसकी आदिमें और ग्रीष्मऋतुकी,वर्षकी, युगकी समाप्ति समय दूसरे आषाढकेअंतमें चौमासी प्रतिक्रमणादि पर्वके कार्य करने शास्त्रोंमें कहे हैं, सो युक्तियुक्तही हैं ।

## १० – चौमासा ४ महीनोंका या ५ महीनोंका ?

देखिये–१२ महीनोंका वर्ष कहा जाता है, मगर जब अधिक महीमहीना होवे तब १३ महीनोंका वर्ष कहा जाता है, इसीतरह यद्यपि चौमासा शब्द व्यवहारसे ४ महीनोंका कहा जाता है, मगर अधि-

क महीनाहोनेसें १३ महीनोंके वर्षकी तरह चौमासाभी पांच महीनोंका होताहै.इसलिये अधिक महीना न होवे तब तो ४ महीनोंके ८ पक्षोंके१२०दिनोंसे चौमासीकार्य होते हैं, मगर जब अधिक महीना होवे तब तो पांच महीनोंके दश (१०) पक्षोंके १५०दिनोंसे चौमासी प्रतिक्रमणादिकार्य होते हैं। यहबात प्रत्यक्ष प्रमाणसे व लौकिक टिप्पणाके प्रमाणसे जग जाहिर है,और आगम पंचांगी सिद्धांत प्रमाणसेतो अनादि सिद्धप्रवाह ऐसाही है.इसलिये इसको कोईभी कभी निषेध नहीं कर सकता है.इसका विशेष विचार तत्त्वज्ञ पाठक गण स्वयं कर सकते हैं।

## ११ — देखो — एक कुतर्क.

कितनेक कहतेहैं,कि-'चौमासी प्रतिक्रमणादि कार्य आषाढमेंकरनेका कहा है, इसलिये प्रथम आषाढमें करोंगे तो दूसरा आषाढ छूट जावेगा और दूसरेमें करोंगे तो, प्रथम छूट जावेगा. या दोनोंमें करोंगे तो पुनरुक्ति दोष आवेगा' ऐसी २ कुतर्क करते हैं, सो भी सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है। क्योंकि प्रथम आषाढमें ग्रीष्मऋतु वगैरह उपर मुजब कारण होनेसे चौमासीकार्य कभी नहीं होसकते, इसलिये 'प्रथम आषाढमें करोंगे तो दूसरा आषाढ छुट जावेगा' ऐसा कहना व्यर्थही है। और दो आषाढ होनेसे दोनोंकी गिनतीपूर्वक ५ महीने दूसरे आषाढमें चौमासीकार्य करते हैं, इसलिये 'दूसरेमें करोंगे तो प्रथम छूट जावेगा' ऐसा कहनाभी व्यर्थही है। और दोनों आषाढोंमें दो वार चौमासी कार्य नहीं;किंतु ग्रीष्मऋतुकी समाप्ति वगैरहे उपर मुजब कारणोंसे दूसरे आषाढमें एकही वार चौमासीकार्य करते हैं. इसलिये 'दोनोंमें करोंगे तो पुनरुक्ति दोष आवेगा' ऐसा कहनाभी व्यर्थहीहै। और चौमासी प्रतिक्रमण तो ४ महीने, या मास वृद्धि होवे तब पांच महीने सब गच्छवाले एकवार प्रत्यक्षपने करतेहैं.इसलिये मास बढने परभी चौमासीकार्य ४ महीने होवे मगर पांच महीने नहीं होवे, ऐसा प्रत्यक्ष असत्य भाषण करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है. इसकोभी विशेष तत्त्वज्ञ पाठक गणस्वयं विचारलेंगे.

## १२–दूसरे आषाढमें चौमासीकार्य करनेकी तरह पर्युषणापर्वभी दूसरे भाद्रपदमें हो सकें, या नहीं?

आषाढ-कार्तिकादि चौमासा ४-४ महीनोंसे होताहै, मगर अधिक महीना होवे तब पांच महीनोंकाभी होता है, यह बात ऊपर

लिखे चुके हैं. इसलिये मासवृद्धि होनेसे १५० दिनोंकी जगह १५० दिनभी चौमासेमेंहोतेहैं. उसमें किसी प्रकारका दोष कोईभी शास्त्र- में नहीं बतलाया. मगर पर्युषणातो वर्षाऋतुमें दिन प्रतिबद्ध होनेसे ५०दिने अवश्यही करना सर्वशास्त्रोंमें कहाहै, उसपर कभी १ दिनभी बढ जावे तो उसका दोष कहाहै. और दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणाकरें, तो ८० दिन होनेसे प्रत्यक्षपने सर्व शास्त्रविरुद्ध होता है. इसलिये दूसरे आषाढमें चौमासी पर्वकी तरह पर्युषणा पर्व ८० दिन होनेसे दूसरे भाद्रपदमें कभी नहीं होसकते हैं, किंतु आगमादि सर्व शास्त्रों- की आज्ञा मुजब ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें करना युक्तियुक्त न्यायसं- पन्नही है, इसको तो विशेष पाठक गण स्वयं विचार सकते हैं.

## १३–जिसको मान्यकरतेहैं उसीकोही उत्थापनकरतेहैं।

हमेशां भाद्रपदमेंही पर्युषणा पर्व करनेका ठहरानेके लिये नि- शीथचूर्णिके अधूरे पाठको आगेकरते हैं, मगर चूर्णिमें तो ५० दिने या ४९ दिने अवश्यही पर्युषणा करना लिखा है, परंतु ५० दिन उ- परांत करना कभी नहीं लिखा और अधिक महीनेके ३० दिनोंकोभी खुलासा पूर्वक गिनतीमें लिये हैं। जिसपरभी दो भाद्रपद होवें,तब ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करना छोडकर, ८० दिने दूसरे भाद्रपदमें करतेहैं। उसीसे जिस चूर्णिका पाठ मान्य करतेहैं,उसी चूर्णिकापाठ (दूसरे भाद्रपदमें ८०दिने पर्युषणा करनेसे) उत्थापनभी करते हैं.इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार सकतेहैं.

## १४—अब देखो एक--वितंडा वाद॥

८० दिने पर्युषणापर्व करनासो शास्त्र विरुद्ध ठहराते हो, मग- र दो आषाढ महीने होवे तब प्रथम आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमण करोंगे, तो–तुमारेभी ८०दिने पर्युषणा पर्व होवेंगे, तब कैसे करोंगे? समाधान भो–देवानुप्रिय ! पर्युषणाके ५०दिनोंकी गिनती ग्रीष्मऋतु- की समाप्ति होनेपर वर्षाऋतुकी शुरूआतसे गिनी जाती है. और प्र- थम आषाढ महीना ग्रीष्मऋतुमें होनेसे उसमें चौमासी कार्य नहीं हो सकते और ग्रीष्मऋतुकी समाप्ति हुए विना व वर्षाऋतुकी शुरू- आत हुए विना प्रथम आषाढसे पर्युषणासंबंधी ५० दिनोंकी गिन- तीभी कभी नहीं हो सकती. इसलिये प्रथम आषाढमें चौमासी का- र्य करने का, व उससे पर्युषणाके ८० दिन गिननेका कहना अज्ञान- ताका कारण है, क्योंकि वर्षाऋतुकी आदिमें दूसरे आषाढके अंतमें चौमासीकार्य होनेसे पर्युषणाके ५०दिन गिननेका निशीथचूर्णि, पू-

युंपणाकल्पचूर्णि वगैरहशास्त्रोंमें कहाहै,इसलिये प्रथम आषाढसे८०
दिन यतलाकर दो श्रावणहोनेपरभी भाद्रपदमें८०दिने पर्युषणाकरना,
या दो भाद्रपद होवे तब दूसरे भाद्रपदमें८०दिनेपर्युषणा ठहराना,स-
र्वथा शास्त्रविरुद्धहै,इसकोभी विवेकी पाठकगण स्वयंविचार लेवेंगे।

## १५ – देखिये यह—कैसी कुयुक्ति है।

कितनेक महाशय अपना असत्य आग्रहको छोड सकते नहीं
तथा सत्यबातको ग्रहणभी कर सकते नहीं और व्यर्थही अपनी स-
चाई जमानेकेलिये कहतेहैं, कि "दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें
पर्युषणापर्व करना किसीभी आगममें नहीं लिखा" ऐसी२ कुयुक्तियें
करतेहैं, और भद्रजीवोंको संशयमें गेरतेहैं.मगर इतना विचार करते
नहींहैं,कि-५०दिनेपर्युषणापर्व करना कल्पसूत्रादि सर्वआगमोंमें लि-
खाहै, यहीजिनाज्ञाहै. देखिये—"सवीसइ राइमासे" वा " सविंश-
तिरात्रे मासे " या " दश पंचके " या " पचाशतैव दिनैः पर्युषणा
युक्तेति वृद्धाः "इन सर्व वाक्योंमें ५०दिने पर्युषणाकरना कहाहै, सो
वर्तमानमें५० दिने दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व क-
रना कल्पसूत्रादि आगमानुसार ठहरताहै.इससे ५० दिन कहो,या दू-
सरा श्रावण, प्रथम भाद्रपद कहो, दोनों एकार्थही हैं. इसलिये 'दू-
सरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना किसी आगममें
नहीं लिखा' ऐसी२ जानबुझकर कुयुक्तियें लगाकर अपना झूठा पक्ष
जमानेकेलिये मायायुक्त भाषण करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है.

## १६—उत्सूत्र प्ररूपणा ॥

चंद्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति-जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति-भगवती-समवायांगादि
आगम-निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि-वृत्ति-प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें अ-
धिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लियेहैं,वे सर्व शास्त्रोंके पाठ छुपा-
नेसे छुप सकते नहीं. और अर्थ बदलनेसे अर्थभी बदला सकते नहीं.
इसलिये कितनेक आग्रही जन कहतेहैं,कि-'उन शास्त्रोंमें तो अधि-
क महीना होनेसे १३ महीनोंके २६ पक्षोंके ३८३ दिनोंका अभिवर्द्धि-
तवर्षका स्वरूप बतलायाहै,मगर१३ महीनोंको गिनतीमें लेनेका क-
हां लिखाहै' ऐसा कहनेवाले प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणा करतेहैं, क्योंकि
देखो-चंद्रप्रज्ञप्तिसूत्रादि वगैरह सर्व शास्त्रोंमें, जैसे- १ वर्षके १२
महीनोंके २४ पक्षोंके ३५५ दिनोंका स्वरूप गणित प्रमाण बतलाया-
है, वैसेही अधिकमहीना होनेसे उसवर्षकेभी १३ महीनोंके २६ प-
क्षोंके ३८३ दिनोंका स्वरूप गणित प्रमाण बतलाया है, इस लिये

चंद्र और अभिवर्द्धित इन दोनों वर्षोंका स्वरूप गणित प्रमाण सर्व शास्त्रोंमें समानरूपसे खुलासापूर्वक होनेपरभी १२ महीनोंके वर्षको प्रमाणभूत मानना और १३महीनोंके वर्षको स्वरूप वतलानेका वहाना वतलाकर प्रमाणभूत नहींमानना.यह तो प्रत्यक्षही अन्यायहै; यदि १३ महीनोंका स्वरूप वतलानेका कहकर गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मानोंगे, तो १२ महीनोंकाभी स्वरूप वतलाया है,उसकोभी गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मानसकोंगे.और शास्त्रोंमें तो १२ या १३ महीनोंके दोनों वर्षोंके समानरूपसे स्वरूप वतलाकर गिनतीमें प्रमाणभूत माने हैं.इसलिये दोनोंप्रकारके वर्षमाननेयोग्यहैं, इसमें शास्त्रप्रमाणसे तो एकभी वर्षका निषेध नहीं होसकताहै. देखिये –११ अंग; व १४ पूर्वादिशास्त्रोंमें जैसे,दर्शन-ज्ञान–चारित्र–चौदहराजलोक-षट्द्रव्य–नवतत्त्व–चौदहगुणस्थान–जीवाजीवादि पदार्थोंका स्वरूप; व चरणकरणानुयोगमें संयमके आराधनकी क्रियाका स्वरूप वतलाया है, वोही सर्वमान्य करनेयोग्य है,इसलिये स्वरूप वतलाना सोही श्रद्धापूर्वक मान्य करनें योग्य सत्यप्ररूपणा कही जाती है। जिसपरभी चरणकरणानुयोगमें संयमकी क्रियाका व षट्द्रव्य – नवतत्त्वादिकका स्वरूप वतलाया है, मगर उस मुजब मान्य करना कहां लिखाहै,ऐसा कोई कहे और उनोंको प्रमाणभूत नहींमानें;तो ११अंग व१४पूर्वोंके उत्थापनकरनेका प्रसंग आनेसे अनेक भवोंकी वृद्धिकरनेवाली उत्सूत्र प्ररूपणाका दोष आवे. इसी तरहसेंही१३ महीनोंका स्वरूपकहकर प्रमाणभूत नहीं मानेंतो सूर्यप्रज्ञप्तिवगैरहपूर्वोक्त शास्त्रोंके उत्थापनकरनेका प्रसंग आनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा ठहरतीहै। और जैसे षट्द्रव्य, नवतत्त्वादिकके स्वरूप शास्त्रोंमें कहेहैं. उसमुजवही मानने पडतेहैं। तैसेही १२ महीनोंके स्वरूपकी तरह; १३ महीनोंकास्वरूपभी शास्त्रोंमें वतलायाहै, उस मुजवही १३ महीनेगिनतीमें प्रमाणभूत माननेपडते हैं.इसलिये '१३ महीनोंके अभिवर्द्धित वर्षका स्वरूप वतलायाहै,मगर मान्यकरना कहां लिखाहै' ऐसी उत्सूत्रप्ररूपणा करना. और भोले जीवोंको संशयमें गेरना आत्मार्थी भवभीरुओंको योग्य नहीं है।

## १७ – लौकिक अधिकमहीना मानना; या नहीं ?

कितनेकमहाशयकहतेहैं,कि–जैनटिप्पणामेंतो पौष और आषाढ दो महीने बढतेथे और अबलौकिकटिप्पणामेंतो श्रावण भाद्रपदादिमहीनेभी बढने लगेहैं सो कैसे माने जावे? इसपर इतनाही विचार कर-

नेकाहै,कि-जैनटिप्पणामें तीसरेवर्षमें जो महीना वढताथा उसकोभी गिनतीमें लेतेथे और जैनटिप्पणामें ज्यादेमें ज्यादे ३६घटिका प्रमाणे दिनमान होताथा, तथा कमतीमें कमती२४ घटिकाप्रमाणे दिनमान होताथा. और माघमहीने दक्षिणायनसे सूर्य उत्तरायनमें होताथा औ- र श्रावणमहीने उत्तरायनसे दक्षिणायनमें सूर्य होताथा और श्रावण वदि एकमसे६२वीं तिथि क्षय होतीथी. इसीप्रकार १ वर्षमें ६ तिथि क्षयहोतीथी बीचमें कोईभीतिथि क्षयनहींहोतीथी. और तिथिबढने कातो सर्वथा अभावहोनेसे कोईभीतिथि कभी वढतीनहींथी और ६० घडीसेकम तिथिकाप्रमाणहोनेसे,६०घडीके ऊपर कोईभी तिथि नहीं होतीथी. और नक्षत्रसंवत्सर, ऋतुसंवत्सर, सूर्यसंवत्सर, चंद्रसंव- त्सर व अभिवर्द्धितसंवत्सरसहित ५वर्षोंके १८३० दिनोंका १ युग, व ८८ ग्रह मानतेथे इत्यादि अनेक बातें जैनटिप्पणामें होतीथी वो जैन टिप्पणा परंपरागत जैनीराजा देशभरमें चलातेथे और पूर्वगत आ- म्नायसे गुरुगम्यतावाले जैनकुलगुरु बनातेथे,इसलिये उसमें ग्रहणा- दि किसीतरहका फरकभीकभी नहीं पडताथा,मगर परंपरागत जैनी राजओंका व पूर्वगत आम्नायका,अभावहुआ और जबसे ८८ग्रहवा- ला जैनपंचांग बंधहुआ, तबसे सर्व जैनसमाजमें९ग्रहवाला लौकिक टिप्पणा माननेकी प्रवृत्ति शुरूहुई, उसमें श्रावण व माघमें दक्षि- णायनमें व उत्तरायनमें सूर्यके होनेका नियम न रहा और हरेक म- हीने बढनेसे ज्येष्ठ–आषाढ व मार्गशीर्ष–पौषादिमेंभी दक्षिणायन व उत्तरायन होनेलगा,तथा क्षेत्रफळ व गणित विभागमें फेर पडनेसे ज्यादेमें ज्यादे ३४ घटिका, व कमतीमें कमती २६ घटीकाप्रमाणे दि- नमानभी मानने लगे और एक तिथिका ६० घटिकासे ज्यादे प्रमाण माननेसे हरेकपक्षमें तिथियोंका क्षयभी होनेलगा और हरेक तिथि- योंकी वृद्धि होनेसे दो दो तिथियेंभी होने लगी. और १२वर्षका युग इत्यादि अनेकबातें अभी जैनपंचांगके अभावसे, लौकिकटिप्पणाकी माननीपडतीहैं, इसीतरह अधिकमहीनाभी लौकिकटिप्पणाकीरीति- से वर्तमानमें माननापडताहै, इसलिये ८४ गच्छोंके सर्व पूर्वाचार्योंने श्रावण भाद्रपदादिमहीने लौकिक टिप्पणामुजब मानेहैं.वोही प्रवृत्ति अभी सर्वजैनसमाजमें शुरू है। और दक्षिणायन,उत्तरायन,तिथिकी हानी, वृद्धि वगैरह तिथि, वार, नक्षत्र, पक्ष, मास, वर्ष आदिक सर्व लौकिक टिप्पणामुजब अभीमानतेहैं.मगर अधिकमहीना बाबत जैन पंचांगकी आड लेकर नहीं मानना, यह न्याय युक्ति बाधक होनेसे

सत्य कभी नहीं ठहर सकताहै. इसलिये ऊपर मुजब बातोंकी तरह श्रावण भाद्रपदादि अधिकमहीनेभी लौकिकटिप्पणामुजब वर्तमानमें मान्य करने सो युक्तियुक्त न्यायसंपन्न होनेसे कभी निषेध नहीं हो सकते. और यद्यपि जैनटिप्पणामें पौष-आषाढ बढताथा, उसबातको जिनकल्पीव्यवहारकी तरह सत्यमानना, श्रद्धारखना, प्ररूपणाकरना. मगर जिनकल्पीव्यवहार अभी विच्छेद होनेसे उनको अंगीकार नहीं करसकतेहैं, उसीतरह अभी जैनटिप्पणाभी विच्छेद होनेसे वर्तमानमें जैनटिप्पणा मुजब तिथि, वार, या पौष-आषाढमहीने माननेकाआग्रहकरना सो देशकालके व सर्वपूर्वाचार्योंके सर्वथाविरुद्ध है.

## १८ – जैन ज्योतिषपरसे अभी जैनटिप्पणा शुरूकरें तो शुरू हो सके; या नहीं ?

यद्यपि जैनज्योतिष्के सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, चंद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्तिआदि अनेक शास्त्रमौजूदहैं, उसपरसे तिथि, वार, मास, पक्ष, वर्षादिकका गणित अभी हो सकताहै. मगर ग्रहणादि सर्वबातें बरोबर मिलान करना मुश्किल पडताहै, इसलिये कितनीक बातोंमें अन्य आधारलेना पडताहै. और लौकिक व जैन दोनोंके गणित विभागमें फेर होनेसे, तिथि, वार, मास, नक्षत्र व ग्रहणादि दोनोंके समानरूपसे बरोबर नहीं आसकते. और पूर्वगतगीतार्थ गुरुगम्यआम्नायके अभावसे व अल्पज्ञताकेकारणसे यदि कोई ग्रहणादि बतलानेमें न्यूनाधिक कुछ फरक पडजावे तो अभी सर्वज्ञशासनकी लघुता होनेका कारण बनजावे. और परंपरागत जैनीराजाओंका अभाव होनेसे व ब्रह्मचारी, व्रतधारी, गुरुगम्यतावाले कुलगुरुओंका अभाव होनेसे; तथा खरतरगच्छ नायक श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीशांतिसूरिजी, श्रीहेमचंद्राचार्यजी वगैरह समर्थ व शासनप्रभावक आचार्योंके समयसेभी बहुतकालसे जैनटिप्पणाविच्छेदहोनेसे, अभी अपने अल्प बुद्धिवालोंसे फिरसे शुरू नहीं होसकताहै. और कोई शुरूकरें तोभी सर्वमान्य युगप्रधान समर्थआचार्यके अभावसे सर्वदेशोंके, सर्वगच्छोंके, सर्व जैनसमाजमें परंपरागत चल सकताभी नहीं। देखिये-जैन शासनमें प्राचीनकालमें विशेषज्ञानी समर्थप्रभावक पूर्वाचार्योंके समयमें जो बात पहिलेसे विच्छेद हो जावे; उसको विशिष्टतर अवधिज्ञानादि रहित अल्पज्ञोंसे इसकालमें फिरसे शुरू नहीं होसके। इतनेपरभी फिरसे शुरू करें,

तो सर्व पूर्वाचार्योंकी आशातनाके तथा शासनकी लघुताके दोषके भागी होवें। इसीतरह जैनपंचागभी प्राचीन पूर्वाचार्योंके समयसे विच्छेद होनेसे,अभीफिरसे शुरू नहीं होसकता.जिसपरभी कोई फिरसे शुरू करें तो२०वे दिन पर्युषणापर्व करनेकी,व पांच पांच दिने अज्ञात पर्युषणास्थापन करनें वगैरह बातें जो विच्छेद होगईहैं, वे सब बातेंभी जैन टिप्पणाशुरू होनेसे पीछीशुरू करनी पडेंगी, और वें सर्व बातें अभी पडताकाल होनेसे फिरसे शुरू नहीं होसकती हैं, इस लिये अभी जैन पंचांग शुरू नहीं होसकताहै।

## १९- अभी लौकिक दो श्रावणादिक महीनोंके; अपने दो आषाढ बनासकें या नहीं?

कितनेक कहते हैं,कि-लौकिक टिप्पणामें श्रावण भाद्रपद बढें तब जैन शास्त्रोंके हिसाबसे दो आषाढ बनालेवे तो पर्युषणाका भेद मिट जावे मगर ऐसाभी कभीनहीं होसकता.क्योंकि देखो-जब जैन पंचांगही अभी विच्छेदहै;और तिथि,वार,नक्षत्र पक्ष मासादि पंचांग संबंधीव्यवहार लौकिक टिप्पणा मुजब करतेहैं,जिसपरभी १ महीनेका फेरफार करदेना योग्यनहींहै। देखिये-दो श्रावण होनेसे भरपूर वर्षाऋतुवाला प्रथम श्रावणशुदी १५ को प्रत्यक्षप्रमाणसेभी विरुद्ध होकर उसकोआषाढ पूर्णिमाकहना यहजगत विरुद्ध होनेसे व्यवहारमेंभी मिथ्याभाषणका दोषलगे। औरपहिले पूर्वाचार्योंनेभीऐसाकभी नहीं किया, इसलिये अभी दो श्रावण या दो भाद्रपदके, दो आषाढ बनाना कभी नहीं बनसकताहै, किंतु लौकिक टिप्पणामुजब दो श्रावण भाद्रपदादि सर्वगच्छोंके पूर्वाचार्यपहिलेसे जैसे मानते आयेहैं, वैसेही वर्तमानमें अपने सबकोभी मान्य करना योग्यहै.बस! धार्मिक व्यवहार पर्युषणपर्वादिकार्य जैन सिद्धांतोंके अनुसार५०वें दिन करने. और तिथि, वार, नक्षत्र, चंद्रयोग, मास, पक्षादि व्यवहार लौकिकटिप्पणाकेअनुसार करना.यहीन्याय युक्तियुक्त व सर्वसम्मत होनेसे सर्व जैनीमात्रको मान्य करना योग्य है, इसलिये इसमें अन्य २ कल्पनायें करनी सर्वथा व्यर्थही हैं।

## २०-पर्युषणा कितने प्रकारकी होती हैं?

निशीथचूर्णि,बृहत्कल्पचूर्णि, कल्पसूत्रनिर्युक्ति,चूर्णि, वृत्तिवगैरह शास्त्रोंमें पर्युषणाके नामांतसे ८ प्रकारसे अनेक भेद बतलाये हैं, मगर यहां तो अभी मुख्यतासे वर्षास्थितिरूप और वार्षिक कार्यरूप

ऐसे दो अर्थ वर्तमानमें सर्व गच्छवाले ग्रहण करतेहैं । इसलिये आ षाढ चौमासीसे ठहरना सो वर्षास्थितिरूप अज्ञात पर्युषणा और मासवृद्धिके सद्भावमें २० दिने या उसके अभावमें ५० दिने ज्ञात (प्रकट) पर्युषणा करना सो वार्षिक कार्यरूप प्रसिद्ध पर्युषणा कर-नेका समझना चाहिये । जब जैनपंचांगके अभावसे २० दिनकी पर्यु-षणा बंधहुई, तबसे लौकिक हरेक मास बढे तो भी ५० दिने वार्षिक कार्यरूप पर्युषणा करनेकी सर्वगच्छोंके पूर्वाचार्योंकी मर्यादा है.

## २१–महीना बढे तब वीश दिनकी पर्युषणा वर्षास्थिति-रूप हैं; या वार्षिकपर्वरूप हैं ?

भो देवानुप्रिय ! जैसे चंद्रवर्षमें ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणा वा-र्षिक कार्यरूप हैं, तैसेही--अभिवर्द्धित वर्षमें २० दिनकी ज्ञात पर्युष-णाभी वार्षिक कार्यरूप हैं । जिसपरभी श्रावणमें वीश दिनकी ज्ञात पर्युषणा सिर्फ वर्षास्थितिरूपमानोंगे,तो भाद्रपदमेंभी५०दिनकी ज्ञात पर्युषणाभी वर्षा स्थितिरूप ठहर जावेंगे और वार्षिककार्य करने स-र्वथा उडजावेंगे. और २० दिने वार्षिककार्य नहीं करने, मगर ५० दिने करने; ऐसाभी कोई शास्त्र प्रमाण नहींहै, और २० दिने ज्ञात पर्युषणा किये बाद पीछे एक महीनेसे वार्षिककार्य करने ऐसाभी कोई शास्त्र प्रमाण नहींहै । इसलिये जैसे-५० दिने भाद्रपदमें वार्षि-क कार्य होतेहैं, वैसेही--२० दिने श्रावणमेंभी वार्षिक कार्य होतेथे । और वर्तमानमेंश्रावण या भाद्रपदबढे;तोभी दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें५०दिने वार्षिक कार्यरूप पर्युषणापर्व करनासो शास्त्राज्ञाहै.

## २२–वार्षिक कार्य१२महीने होवें;या १३ महीनेभी होवें ?

देखो पहिलेभी जैसे-२०दिने श्रावणमें वार्षिककार्यकरतेथे तबभी आवतेवर्ष भाद्रपदतक१३महीने होतेथे,तैसेही अभी वर्तमानमेंभी ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें वार्षिक कार्य होनेसे आवते वर्ष१३महीने होतेहैं.इसमें कोई दोषनहींहै, देखिये-दो पौष,दो आषाढ, अथवा दो आसोज होनेसेभी १३ महीने प्रत्यक्षमें होते हैं; इसलिये महीना बढे तब तो पहिले या पीछे १३ महीनोंके २६ पाक्षिक प्रति-क्रमण सर्व गच्छवालोंकोही होतेहैं । और जैनमें या लौकिकमें १२ महीनोंके या १३ महीनोंके दोनोंवर्षमाने हैं, इसलिये १२महीनेभी वा-र्षिक कार्यहोवें. और१३महीनेभी वार्षिककार्यहोवें,यह कोई नवीन बात नहीं है । किंतु अनादि मर्यादाका प्रवाह ऐसाही है.जिसपरभी १३

महीने वार्षिक कार्य होनेका दोष बतलाकर, १२ महीने वार्षिककार्य होनेकाठहरानेकेलिये अधिकमहीनेको बीचमेंसे छोडदेना अनुचितहै,

## २३–पर्युपणा संबंधी कल्पसूत्रका पाठ वार्षिक कार्योंके लिये है, या केवल वर्षास्थितिके लियेही है?

कल्पसूत्रका पर्युपणा संबंधी पाठ वर्षास्थितिके साथही वार्षिक कार्योंकेलियेभी है, जिसपरभी उसको सिर्फ वर्षास्थितिरूप ठहराकर वार्षिककार्य निषेध करते हैं, वो गंभीर आशयवाले अनेकार्थयुक्त आगमपाठके अर्थको उत्थापनकरनेवालेबनतेहैं. जैसे "णमो अरिहंता णं" पदके अर्थमें कर्मशत्रुको जितनेवाले अरिहंतभगवानको नमस्कार करनेका अर्थ अनादिसिद्धहै, जिसपरभी कर्मशत्रुके अर्थको नहीं माननेवालेको अज्ञानी समझा जाताहै. तैसेही कल्पसूत्रादिके ५० दिने पर्युपणाकरनेसंबंधीपाठोंमें वार्षिककार्यकरनेका अर्थतो अनादिसिद्धहै, जिसपरभी ५० दिने वार्षिक कार्योंको नहीं मानने वालोंको अज्ञानी या हठवादी समझने चाहिये।

## २४-भगवान् किसीप्रकारकेभी पर्युपणा करतेथे या नहीं?

उग्रविहारी जिनकल्पीमुनियोंके तथा स्थविर कल्पीमुनियोंके आचारमें बहुतभेदहै, और भगवान्तो अनंतशक्तियुक्त कल्पातित हैं. इसलिये भगवान्के आचारमेंतो विशेष भेद है तो भी वर्षाऋतुमें वर्षास्थितिरूप पर्युपणा तो सर्वकोईकरतेहैं और स्थविर कल्पी मुनियोंके तो वर्षास्थितिके साथही चौमासी व वार्षिकपर्वके कार्य करने वगैरहका अधिकार प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी कल्पसूत्रमें पर्युपणा शब्दमात्रको देखकर अतीव गहनाशयवाले सूत्रार्थके भावार्थको गुरुगम्यतासे समझे बिना भगवान्कोभी वार्षिक प्रतिक्रमणादिकरनेवाले ठहराने, या ५० दिनकी पर्युपणाको वार्षिक कार्योंरहित ठहरानी, सो अज्ञानता है. इसकोभी विवेकीजन स्वयं विचार सकते हैं.

## २५.-पर्युपणासंबंधी सामान्य व विशेपशास्त्र कौन २ हैं?

देखो— जिसशास्त्रमें मुख्यतासे एक विषयको विशेषरूपसे खुलासाके साथ कथन किया होवे, उसको विशेष शास्त्र कहते हैं। और जिसशास्त्रमें थोडा२ बहुत बातोंका कथनहोवे, उसको सामान्य शास्त्रकहतेहैं। यद्यपि यथा अवसर दोनोंशास्त्रमान्यहैं, मगर सामान्यशास्त्रसे विशेषशास्त्र ज्यादे अधिक बलवान होताहै. इसलिये मुख्यतासे विशेष शास्त्रकी बात अंगीकार करनेके समय, सामान्य शास्त्रकी बात

गौण्यताभावमें रहती है. यहन्याय विद्वानोंमें सर्वत्र प्रसिद्धही है। औरभी देखिये— जैसे श्री भगवतीजीसूत्र बडा कहा जाता है, तोभी उनमें बहुत बातोंका थोडा २ कथन होनेसे संयमके आराधनकी क्रिया संबंधी सामान्यशास्त्र कहा जावे.और आचारांग, दशवैकालिक छोटे २ सूत्रहैं,तोभी उसमें मुख्यतासे संयमकेआराधनका विशेष विधान होनेसे यह संयमक्रियासंबंधी विशेषशास्त्रकेहजातेहैं. इसीतरह समवायांगसूत्रमें थोडा २ अनेक बातोंका कथन होनेसे पर्युषणासंबंधी समवायांगसूत्र सामान्य शास्त्रहै, और कल्पसूत्रमें तो खास पर्युषणासंबंधी सामान्य व विशेष दोनों प्रकारसे विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ वर्षास्थितिरूप व वार्षिकपर्वरूप दोनों पर्युषणाका अधिकार है. इसलिये पर्युषणासंबंधी श्रीकल्पसूत्र विशेषशास्त्रहै. यही श्रीकल्पसूत्ररूप विशेषशास्त्रको पर्युषणापर्वमें चतुर्विधसंघके मांगलिकके लिये वर्षोंवर्ष प्रत्येक गांव नगरादिमें सर्वत्र वांचनेमें आता है. उस विशेषशास्त्रके पर्युषणासंबंधी मूलमंत्ररूप मुख्य विशेष पाठको छोडना और समवायांगके सामान्यपाठपर दृढ आग्रहकरना सो आत्मार्थी विवेकी विद्वानोंको योग्य नहीं है. मगर अल्पज्ञ विना समझवाले अपना आग्रह न छोडें;तो उनकी खुशीकी बात है ।

## २६–पर्युषणासंबंधी हमेशां नियत नियम ५० दिनका है; अथवा ७० दिनका है?

देखो–पर्युषणासंबंधी सर्वशास्त्रोंमें ५० दिनको पर्युषणा कियेविना उल्लंघनकरना निवारणक्रियाहै, इसलिये ५० दिनका नियतनियमहै,और ७०दिनसे ज्यादे दिन होवे उसका कोईभी दोष किसीभी शास्त्रमें नहींकहा, इसलिये ७० दिनका हमेशां नियतनियम नहींहै.

१– देखो पहिलेभी २०दिने पर्युषणा करतेथे, तबभी पीछे१०० दिन रहतेथे. इसलिये ७०दिनका हमेशा नियत नियम नहींहै।

२– अबीभी श्रावण भाद्रपद या आसोज बढे तब तपगच्छके पूर्वाचार्योंके कथन मुजब कल्पसूत्रकी टीकाओंके वाक्यसेभी ५० दिनेपर्युषणा होवे तबभी पीछे १०० दिन रहते हैं। इसलियेभी ७० दिन रहनेका हमेशां नियत नियम नहीं है।

३– पचास दिन उल्लंघेतो सर्वशास्त्रोंमें उसका प्रायश्चित्त कहा है,मगर ७० दिन उल्लंघेतो किसीभी शास्त्रमें उसका प्रायश्चित्त नहीं कहा इसलियेभी७० दिनका हमेशां नियतनियम नहीं ठहरसकताहै.

४- ५० दिने तो ग्रामादिक न होवे तोभी जंगलमें वृक्षनीचेभी अवश्यही पर्युषणा करनेकी आवश्यकता बतलाईहै, और ७० दिनकी स्वाभाविक गिनती बतलाई है,परंतु वैसीही ७०दिनकी आवश्यकता नहींबतलाई,इसलियेभी७०दिनका हमेशां नियत नियम नहींहै.

५- ७० दिवसकापाठ मासवृद्धिके अभावसंबंधी है, इसलिये उसको मासवृद्धि होनेपरभी आगेकरना व उसपर आग्रहकरना सो शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायविरुद्ध होनेसे सर्वथा योग्य नहीं है.

६- इन्हीं समवायांगसूत्रके टीकाकार महाराजने स्थानांगसूत्रवृत्तिमें, मासवृद्धि होवे तब पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिकतक १००दिन ठहरनेकाकहाहै, उसको उत्थापनकरना और शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध होकर १०० दिनकी जगहभी ७० दिन ठहरनेका आग्रह करना सो आत्मार्थियोंको कभी योग्य नहीं है।

७- निशीथचूर्णि-बृहत्कल्पचूर्णि--वृत्ति--पर्युषणाकल्पनिर्युक्ति--चूर्णि-वृत्ति-गच्छाचारपयन्नवृत्ति-जीवानुशासनवृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमें, वर्षास्थितिकेलिये कालावग्रहमें, जघन्यसे ७० दिन, मध्यमसे ७५-८०-८५-९०-९५ यावत् १२० दिन, और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालमान प्रमाण बतलाया है, उसके अंदरमेंसे एक दिनमात्रभी गिनतीमें नहीं छूट सकता. जिसपरभी शास्त्रविरुद्ध होकर वर्षास्थितिके अनियत व जघन्य७०दिनके नियमको हमेशां नियत नियम ठहरानेका आग्रह करना सो विवेकीयोंको सर्वथा योग्य नहींहै॥

८- निशीथचूर्ण्यादिमें द्रव्य-क्षेत्र-काल और भावसे पर्युषणाकी स्थापना करनी बतलायी है, उसमें कालस्थापना संबंधी समय-आवलिका-मुहूर्त्त-दिन-पक्ष-माससे अधिक महीनेकेभी ३० दिनोंकी गिनती सहित प्रत्येक दिवसको पर्युषणासंबंधी कालस्थापनाके अधिकारमें गिनतीमेंलियेहैं,इसलिये पर्युषणासंबंधी दिनसंख्यामेंसे एक दिनभी गिनतीमें निषेध नहीं होसकताहै, जिसपरभी जघन्य ७० दिनके अनियत नियमको मास बढनेपरभी आगे करते हैं. और फिर अधिकमहीनेके ३० दिन गिनतीमें छोडकर १०० दिनके ७० दिनभी अपनी कल्पनासे बना लेते हैं, सो सर्वथा चूर्णिके विरुद्ध है, इसका विशेष विचार तत्त्वज्ञजन स्वयं कर लेवेंगे।

९- सीत्तर दिनका नियत नियम न होनेसे ७० दिनके ऊपर ज्यादे दिनभी होते हैं, और " वासावासाए अणातुट्ठाए, आसोए कप्पिए वा निग्गंताणं, अट्ठ अतिरित्ता भवंति " इत्यादि निशीथचूर्णि,

बृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, वृत्ति आदि अनेकशास्त्रोंमें लिखे मुजब वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार करें; तो ७० दिनसे कमती भी ४०दिन, या ४५-५० दिनभी होतेहैं। देखो- पहिले ५० दिने वार्षिक कार्य जब लग नहीं करें;तब तक विहार करनेमें आताथा. मगर अभी वर्तमानमें तो आषाढ चौमासी बाद विहार करनेकी रूढी नहीं है। तैसेही पहिले वर्षाके अभावसे आसोजमेंभी विहार करते थे, मगर अभीतो वर्षा नहींहोवे रस्तोंके कीचड सुककर रस्ते साफ होगयें होवें तो भी कार्त्तिक पूर्णिमा पहिले आसोजमें विहार करने की रूढी नहीं है, इसलिये वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार नहीं कर सकते. और कभी दो आसोज होवें तो भी कार्त्तिक तक १०० दिन ठहरतेहैं। इसलियेभी ७० दिनका हमेशां नियत नियम नहींहै। इस बातको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार लेवेंगे।

## २७-महीना बढे तब होली, दीवाली वगैरह लौकिक पर्व पहिले महीनेमें होवें या दूसरे महीनेमें होवें?

देखो- कितनेक पर्व पहिले महीनेमें होते हैं, और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमेंभी होते हैं. जब दो भाद्रपद होवेंगे; तब जन्माष्टमी का पर्व पहिले भाद्रपदमें करते हैं, और गणेश चौथका पर्व दूसरे भाद्रपदमें करतेहैं. तथा जब दो आसोज होवेंगे तब श्राद्धपक्ष पहिले आसोजमें करतेहैं, और दशहराका पर्व दूसरे आसोजमें करते हैं. तथा दो कार्त्तिक होवे तब दीवाली पर्व पहिले कार्तिकमें करते हैं. इसीतरहसे बारहहीमासोंके पर्व कार्य कृष्णपक्षसंबंधीपर्व पहिले महीनेमें और शुक्लपक्ष संबंधी पर्व दूसरे महीनेमें समझ लेना. और "मलमासो द्वेधा अधिक मासः-क्षयमासश्चेति। तदुक्तं काठकगृह्ये। यस्मिन् मासे न संक्रांतिः, संक्रांति द्वयमेव वा मलमासो स विज्ञेयो मासः स्यात् तु त्रयोदशः। तथा च उक्तं हेमाद्रि नागर खंडे। नभो वा नभस्यो वा मलमासो यदा भवेत् सप्तमःपितृपक्षः स्यादन्यत्रेव तु पंचमः। इत्यादि" निर्णयसिंधु, धर्मसिंधु, निर्णयदीपकादि लौकिक धर्मशास्त्रोंके प्रमाणानुसार, आषाढ चौमासीसे पांचवा पितृपक्ष (श्राद्धपक्ष) होताहै, मगर जब श्रावण, भाद्रपद बढे तब उसकी गिनतीसे सातवा [ ७ ] श्राद्धपक्ष होताहै, इसलिये लौकिकवाले भी अधिकमहीनेके३०दिन गिनतीमें लेतेहैं. जिसपरभी लौकिकवाले अधिकमहीनेके ३०दिन गिनतीमें नहींलेते,या प्रथम महीनेमें दीवाली

व जन्माष्टमी वगैरह पर्वकार्य नहीं करते; ऐसा जान बुझकर मायामृ-
षा कथन करना और बालजीवोंको उलटा रस्ता बतलाना भवभीरु
आत्मार्थियोंको सर्वथा योग्य नहीं है।

## २८- गणेश चौथके पर्वकी तरह पर्युषणा पर्वभी दूसरे भाद्रपदमें हो सकें या नहीं ?

भो देवानुप्रिय! गणेश चौथका पर्वतो मास प्रतिबद्ध होनेसे मासवृद्धिके अभावमें आषाढ चौमासीसे दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने भाद्रपदमें होताहै. मगर कभी श्रावण या भाद्रपद बढे तब तो तीसरे महीनेके छठ्ठे पक्षमें ८० दिने दूसरे भाद्रपद होताहै। इसी-तरह मास बढनेके अभावमें अढाई (२॥) महीनोंसे पांचवा श्राद्धपक्ष होताहै. मगर श्रावणादि मासबढे तब तो साढेतीन (३॥) महीनोंसे सातवा श्राद्धपक्ष होताहै, तथा दीवालीपर्वभी मासवृद्धिके अभावमें ३॥ महीनोंसे ७ वें पक्षमें कार्तिकमें होता है, मगर श्रावणादि ब-ढे तबतो साढेचार (४॥) महीनोंसे ९ में पक्षमें होता है. यह बात प्रत्यक्षप्रमाणसे जगतप्रसिद्ध सर्वजन सम्मतही है. और पर्युषणापर्व तो दिन प्रतिबद्धहोनेसे दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५०दिने अवश्यही करने सर्वशास्त्रोंमेंकहेहैं. इसलिये गणेशचौथके पर्वकी तरह पर्युषणा-पर्वभी दूसरेभाद्रपदमें करें तो तीसरेमहीनेके छठ्ठेपक्षमें ८०दिनहोनेसे शास्त्रविरुद्धहोताहै, इसलिये दूसरेभाद्रपदमें पर्युषणापर्व नहींहोसक-ते. किंतु दूसरेमहीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने प्रथमभाद्रपदमेंही करना शास्त्रानुसार होनेसे आत्मार्थियोंको योग्यहै। इसलिये मासप्रतिबद्ध लौकिक गणेशचौथकी तरह दिनप्रतिबद्ध लोकोत्तर पर्युषणापर्वतो दूसरे भाद्रपदमें ८०दिन होनेसे कभी नहीं होसकतेहैं. इसबातकोभी विशेष तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे। ..

## २९-पहिले पौषादि मास बढतेथे तब कल्याणकादि तप; अपने बडील कैसे करतेथे ?

पहिले पौषादि मास बढतेथे तब दोनों महीनोंके चारों पक्षों-में-पहिले पक्षमें, या दूसरेपक्षमें, वा तीसरेपक्षमें, अथवा चौथेपक्षमें, जिसपक्षमें, जिसरोज, जिन जिन तीर्थंकर भगवान्‌के जो जो च्यव-न-जन्मादिकल्याणक हुएहोंवे, उसमुजब उस उस पक्षमें, अर्थात् दोनों महीनोंके ४पक्षोंमें ज्ञानीमहाराजोंकोपूछकर आराधनकरतेथे. यह अ-नादिकालसे ऐसीही मर्यादा चलीआतीहै। इसलिये अधिकमहीनेमें

कल्याणकादि तप नहींहोसकते,ऐसा कहना प्रत्यक्ष मृषाहै । देखो— अनंतकालसे अनंततीर्थंकर महाराजहोगये हैं, उन महाराजोंके च्यवन-जन्म-केवलज्ञानादि कल्याणक होनेमें, कोईभी पक्ष,कोईभी मास,कोईभी दिवस; या कोईभी वर्ष बाधक कभी नहींहोसकतेहैं, किंतु हरेक मास, हरेक पक्ष, हरेक ऋतु व हरेक दिवसमें होसकते हैं. इसलिये पहिले महीनेके या दूसरे महीनेके प्रथमपक्षमें या दूसरे पक्षमें जिसरोज च्यवनादि जो जो कल्याणक हुए होवें उसी महीनेके उसी पक्षमें उसीरोज उन्हीं कल्याणकोंका आराधनकरना शास्त्रानुसारही है.इसलिये इसको कोईभी निषेध नहीं कर सकता है। मगर अभी जैनपंचांगके अभावसे व ज्ञानीमहाराजके अभावसे अधिक पौषमें या अधिक आषाढमें कौन २ भगवान्के कौन २ कल्याणक हुए हैं, उनकी मालूम नहीं होनेसे तथा लौकिकटिप्पणामें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसे चैत्र-वैशाखादि महीने बढे तब भी परंपरागत ८४ गच्छोंके सभी पूर्वाचार्योंने लौकिक रूढीके अनुसार कितनेक पर्व प्रथम महीनेमें और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमें करनेकी प्रवृत्ति रखीहै। उसी मुजब वर्तमानमेभी करनेमेंआते हैं। देखिये-जैसे-कार्तिकमहीने संबंधी श्रीसंभवनाथस्वामीजीके केवलज्ञानकल्याणक, श्रीपद्मप्रभुजीके जन्म व दीक्षा कल्याणक, श्रीनेमिनाथजीके च्यवन कल्याणक और श्रीमहावीरस्वामीके निर्वाणकल्याणक व दीवालीपर्वादि कार्य दो कार्त्तिकहोवे; तब प्रथमकार्त्तिकमेंकरनेमें आतेहैं; तथा दो पौष होवें तब श्रीपार्श्वनाथजीका जन्मकल्याणक पौषदशमीकापर्व प्रथम पौषमहीनेमें करनेमेंआताहै, और जब दो चैत्रमहीने होवे तब श्रीपार्श्वनाथजीके केवलज्ञान कल्याणकादि पर्वकार्य उष्णकालके प्रथममहीनेके प्रथमपक्षमें अर्थात् पहिलेचैत्रमें करनेमेंआतेहैं.मगर श्रीमहावीरस्वामीके जन्मकल्याणक व ओलीआदिकपर्वतो उष्णकालके दूसरे महीनेके चौथे पक्षमें अर्थात् दूसरे चैत्रमें करनेमें आतेहैं. ऐसेही दोआषाढहोवें तब श्रीआदीश्वरभगवान्के च्यवनादि उष्णकालके चौथेमहीनेकेसातवेपक्षमें प्रथमआषाढमें करनेमेंआतेहैं,और श्रीमहावीरस्वामीके च्यवनादि पांचवे महीनेके दशवेपक्षमें दूसरे आषाढमें करनेमेंआतेहैं.इसीतरहअधिकमहीनेके दोनोंपक्षोंकीगिनतीसहित सर्व महीनोंके कार्य यथायोग्य कल्याणकादि तप वगैरह करनेमेंआतेहैं। इसलिये कल्याणकादि पर्वकार्योंमें अधिकमहीना गिनतीमें नहींलेते,ऐसाकहनासर्वथा अनुचितहै. इसकोविशेषतत्त्वज्ञजनस्वयंविचारलेंगे.

## ३०– जब अधिकमहीना होंवे; तब तेरह महीनोंके संवच्छरी क्षामणों संबंधी खुलासा.

जैसे-इन्हीं भूमिकाके पृष्ठ २२ वें के मध्यमें २२ वें नंबरके लेख मुजब वार्षिक कार्य १२महीनेभी होंवे, और जब महीना बढे तब तेरह महीनेभी होवें। तैसेही संवच्छरी क्षामणेभी १२ महीनेभी होवें और जब महीना बढे तब तेरहं महीनेभी होवें,देखो-चंद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, प्रवचनसारोद्धारसूत्रवृत्ति, ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्ति, निशीथचूर्णि वगैरह अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी, जब महीना बढे तब उस वर्षके १३महीनोंके २६ पक्ष खुलासा पूर्वक लिखे हैं. इसलिये १३ महीनोंके २६ पक्षोंके संवच्छरीमें क्षामणे करनेका ऊपर मुजब अनेक प्राचीनशास्त्रानुसारहै. जिसपरभी कोई कहेगा, कि-उन शास्त्रोंमें तो १३ महीनोंके २६ पक्षोंके संवच्छरीमें क्षामणेकरनेका नहींलिखा.मगर ऐसा कहनेवालोंको अतीव गहनाशयवाले शास्त्रोंके भावार्थको समझमें नहीं आया मालूम होता है, क्योंकि – देखो-उन शास्त्रोंमें, जैसे– पक्षका, चौमासेका, व वर्षका गणितसे जो जो प्रमाण बतलाया है, तैसेही उन्हीं शास्त्रोंके उन्हीं प्रमाण मुजब, पाक्षिक, चौमासी व वार्षिक पर्वादि कार्य करनेमें आते हैं, इसलिये जैसे-जिसवर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्ष होवें, उसी वर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्षोंके संवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं। तैसेही उसी मुजब जब जिस वर्षमें अधिकमहीना होनेसे१३महीनोंके २६पक्ष होवें; तब उस वर्षमें १३ महीनोंके २६ पक्षोंके संवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं. इसलिये उन शास्त्रोंमें १३ महीनोंके क्षामणे नहींलिखे, ऐसा कहना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसे आज्ञानताका कारण है।

औरभी देखिये आवश्यक बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमेंभी जहां जहां वार्षिक प्रतिक्रमणका अधिकार आया है, वहां वहांभी 'संवच्छर' शब्द लिखा है. सो संवच्छर शब्दके १२ महीनोंके २४ पक्ष, व १३ महीनोंके २६ पक्ष, ऐसे दोनों अर्थ आगमोंमें प्रसिद्धही हैं, इसलिये १२ महीनोंके २४ पक्षका अर्थ मान्य करके क्षामणोंमें कहना, और १३ महीनोंके २६ पक्षका अर्थ मान्य नहीं करना व क्षामणोंमेंभी नहीं कहना, यह तो प्रत्यक्षमेंही आगमार्थके उत्थापनका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है, इसलिये दोनों प्रकारके अर्थ मा-

न्य करके उस मुजब प्रमाण करना आत्मार्थी सम्यक्त्व धारियोंको योग्य है. इसबातको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार सकतेहैं। और इसविषयका विशेष खुलासाभी इसी ग्रंथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तक छपगया है, उसके देखनेसे सब निर्णय हो जावेगा।

## ३१- पांच महीनोंके चौमासी क्षामणां संबंधी खुलासा.

पहिले जैनटिप्पणामें जब पौषमहीना बढताथा तबभी फाल्गुनचौमासा पांचमहीनोंका होताथा, तथा जब आषाढमहीना बढताथा तबभी आषाढ चौमासा पांच महीनोंका होताथा, तैसेही अभी वर्तमानमें लौकिक टिप्पणामें श्रावणादि बढतेहैं, तबभी कार्तिक चौमासा पांच महीनोंका होता है. यद्यपि सामान्य व्यवहारसे चौमासा ४ महीनोंका कहा जाताहै, मगर जब अधिकमहीना होवे तब विशेष व्यवहारसे निश्चयमें पांच महीनोंके १० पाक्षिक प्रतिक्रमण सर्व गच्छवालोंको प्रत्यक्षमेंही करनेमें आते हैं। और जितने मास पक्षोंका प्रायश्चित [ दोष ] लगा होवे, उतनेही मास पक्षोंकी आलोचना [ क्षामणा ] करना स्वयं सिद्धही है। और मास बढनेसे पांच महीनोंके दश पक्ष होनेपरभी उसमें; ४ महीनोंके ८ पक्षोंके क्षामणे करने और एकमहीनेके दो पक्षोंकी आलोयणा छोडदेनी यह सर्वथा अनुचित है। इसलिये ऊपर मुजब ३० वें नंबरके १२ मासी संवच्छरी क्षामणां संबंधी लेख मुजबही यथा अवसर पांच महीनोंके दशपक्षोंके चौमासेमें क्षामणेकरने शास्त्रानुसार युक्तियुक्तहोनेसे कोईभी निषेध कभी नहींकरसकता,इसकाभी विशेषखुलासा इसग्रंथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तकके क्षामणांसंबंधी लेखमें छपगयाहै, वहांसे जान लेना.

## ३२ – १५ दिनोंके पाक्षिक क्षामणां संबंधी खुलासा।

जंबूद्वीपपन्नत्तिसूत्रवृत्ति,ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्ति,लोकप्रकाशादि जैन-ज्योतिष्के शास्त्रानुसार तो जिसपक्षमें तिथिका क्षयहोवे, वो पक्ष१४दिनोंकाहोताहै और जिसपक्षमें तिथिकाक्षयनहोवे,वो पक्ष १५ दिनोंका होता है। मगर लौकिक टिप्पणामें तो अभी हरेक तिथियोंकी हानी और वृद्धि होतीहै,इसलिये कभी१३दिनोंकाभी पक्ष होता है, कभी १४ दिनोंकाभी पक्ष होताहै, कभी १५दिनोंकाभी पक्ष होता है और कभी १६दिनोंकाभी पक्ष होताहै,मगर व्यवहारसे१५ दिनोंका पक्ष कहाजाताहै. इसलिये व्यवहारसे पाक्षिकप्रतिक्रमणमें १५ दिनोंके क्षामणे करनेमेंआतेहैं-मगर निश्चयमें तो प्रतिक्रमण करनेके समय तक जितने रोजके कर्मबंधन हुए होंगे, उतनेही रोजके कर्मोंकी नि-

र्जरा होगी, किंतु ज्यादे कम कभी नहीं होसकेगी. इसलिये निश्चय और व्यवहारके भावार्थको समझे विना शब्दमात्रको आगे करके विवाद करना विवेकी आत्मार्थियोंको तो योग्यनहींहै, इसकाभी विशेष खुलासा इसीग्रंथके क्षामणासंबंधी प्रकरणके लेखसे जानलेना.

## ३३-अपेक्षा विरुद्ध होकर आग्रह करना योग्य नहीं है।

मासवृद्धिके अभावमें ४महीनोंके चौमासीक्षामणे, व १२ महीनोंके संवच्छरी क्षामणे करनेका कहाहै. उसकी अपेक्षा समझे विना ही मासवढनेपरभी उसीपाठको आगे करना और ५ महीनोंके १०पक्ष, व १३ महीनोंके २६ पक्ष शास्त्रोंमें लिखेहैं. उन पाठोंको छुपादेना. यह तत्वज्ञ आत्मार्थियोंको योग्यनहींहै,इसीतरह जब पौष व चैत्रादि महीनेवढे तब प्रत्येकमहीनेके हिसाबसे विहारकरनेवाले मुनिमहाराजोंको एककल्प चौमासेका और नवमहीनोंके नवकल्प मिलकर दशकल्पीविहार प्रत्यक्षमें होताहै। जिसपरभी महीनावढनेके अभावसंबंधी एककल्प चौमासेका और ८महीनोंके ८ कल्प मिलकर ९ कल्पीविहार करनेका पाठबतला करके मासवढे तबभी दशकल्पी विहारको निषेधकरनेकेलिये भोलेजीवोंको संशयमेंगेरना यहभीविवेकी सज्जनोंको सर्वथा योग्यनहीं है, इसीतरह मासवढनेके अभावकी अपेक्षासंबंधी हरेकबातोंको मासवढनेपरभी आगेलाकर उसका आग्रहकरना और मासवृद्धिकी अपेक्षावाले शास्त्रोंकीबातोंको छोडदेना सर्वथा अनुचितहै. इसको विशेषतत्वज्ञ पाठकगण स्वयंविचार लेवेंगे.

## ३४- विषय छोडकर विषयांतर करना योग्य नहीं है।

५० दिनोंकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधनकरनेकी अपनेही पूर्वाचार्योंकी सत्यबातकोग्रहण करसकते नहीं और पचास दिनोंकी गिनती उडानेके लिये ऐसा कोई दृढ बाधक प्रमाणभी दिखला सकते नहीं,इसलिये दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाका विषयछोडकर,होली,दीवाली,ओली आदिक मास प्रतिबद्ध कार्योंके विषयकी बात बीचमें लाते हैं, सो भी यह असत्य आग्रहकी सूचना रूप विषयांतर करना योग्य नहीं है। क्योंकि ऐसे तो मासप्रतिबद्ध कार्योंमें कितनेही महीनें, और कितनेही वर्षभी छूट जातेहै.देखो-मास प्रतिबद्धकार्य तो एक महीनेसे करनेके होंवे सो अधिक महीना होंवे तब एक महीनेकी जगह कितनेक पर्व दूसरे

महीनेभी किये जातेहैं। और दूज-पंचमी-अष्टमी-चतुर्दशी वगैरहमें उपवास करनेका, ब्रह्मचर्य पालनेका, रात्रिभोजन त्याग करनेका इत्यादि व्रत, नियम पच्चख्खाण तो दोनों महीनोंमें दो दो वार करनेमें आतेहैं। और पर्युषणापर्व तो मास बढे तो भी ५० दिनकी जगह ५१वें दिनभी कभी नहींहोसकते हैं. इसलिये दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्वके साथ,मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली दशहरा वगैरहका विषय लाना सो विषयांतर होनेसे सर्वथा अनुचित है।

और महीनावढनेके अभावमें ओलियोंका पर्व छट्ठे महीने करनेका शास्त्रोंमें कहाहै, मगर जब कभी महीना बढजावे तबतो प्रत्यक्ष प्रमाणसे और शास्त्रीय हिसाबसेभी सातवें (७) महीने ओलीयोंकापर्व होताहै. तो भी व्यवहारसे छट्ठे महीने आंबीलकी ओलियें करनेका कहाजाता है. देखो जैसे- श्रीआदीश्वरभगवान्‌ने चैत्र वदी ८ [ गुजरातदेशकी अपेक्षासे फागण वदी ८ ] को दीक्षा अंगीकारकी थी और दीक्षाके दिनसे लेकर तपस्याका पारणा दूसरे वर्षमें वैशाखशुदी३ को हुआथा, तोभी व्यवहारसे सर्व शास्त्रोंमें वर्षी तपका पारणा लिखा है. और ऐसेही वर्षीतपका पारणा सर्व कोई जैनीमात्र अभीभी कहते हैं. मगर दिनोंकी गिनतीसे तो १३ महीनोंके ऊपर १० दिन होनेसे ४००दिन पारणाके रोज होतेहैं. जिसमेभी कदाचित उस वर्षमें बीचमें अधिक महीना आजावे तो १४ महीनेके उपर १० दिन होनेसे ४३०दिनेपारणा होताहै. तोभी व्यवहारसे वर्षी तप करनेका कहाजाताहै, और यह बात तो अभी वर्तमानमेंभी वर्षी तप करनेवालोंके सर्वके अनुभवमें प्रत्यक्षही आती है, इसलिये ४३० दिने पारणा करते हैं, तोभी व्यवहारसे वर्षीतपही कहते हैं। और व्यवहारसे वर्षके ३६० दिन होते हैं, मगर निश्चयमें तो ४३० दिने पारणा करनेका बनता है. तो भी किसी तरहका विसंवाद या दोष नहीं आ सकता. इसी तरहसेही व्यवहारसें ओली ६ महीने, चौमासा ४ महीने व वार्षिक पर्व १२ महीने करनेका कहतेंहैं. मगर जब बीचमें अधिक महीना आजावे तब तो निश्चयमें, ओली७महीने, चौमासा ५ महीने,व वार्षिकपर्व१३महीने होताहै.तोभी तत्वदृष्टिसे कोई तरहका विसंवाद या दोष कभी नहींआसकताहै.मगर पर्युषणापर्व तो अधिक महीना होवे तबभी आषाढ चौमासीसे वर्षाऋतुके ५० वें दिनकी जगह५१वें दिनभी कभी नहीं होसकते. इसलिये मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली,ओली वगैरहका दृष्टांत दिन प्रतिबद्ध पर्युषणामें बतलाना सो

विषयांतर होनेसे सर्वथा शास्त्रविरुद्धहै और व्यवहारसेभी प्रत्यक्ष अनुचितहै,इसबातको विशेष तत्त्वज्ञ पाठकजन स्वयंविचार लेवेंगे।

## ३५ – लौकिक श्रावणादि अधिक महीनोंकी तरह क्षयमहीनेभी मान्यकरने योग्य हैं या नहीं ?

पर्युषणापर्वादि धार्मिककार्योंके करनेका भेदसमझे विनाही अधिक महीनेके३०दिनोंमें चौमासी व पर्युषणादिपर्वकार्य नहींकरनेका कितनेक लोगआग्रह करतेहैं,मगर कभी कभी श्रावणादि अधिकमहीनेवाले वर्षमें कार्त्तिकादि क्षयमासभी बीचमें आतेहैं, तबतो कार्त्तिक महीनेसंबंधी श्रीवीरप्रभुके निर्वाण कल्याणकका तप,दीवालीका पर्व, श्रीगौतमस्वामीके केवलज्ञान उत्पन्न होनेका महोत्सव,ज्ञानपंचमीका आराधन,चौमासी प्रतिक्रमण व कार्त्तिक पूर्णिमाका उच्छव वगैरह सर्वकार्य तो उसी क्षयकार्त्तिकमासमेंही करतेहैं. और लौकिकमें अधिकमहीना या क्षयमहीना दोनों बरोबरही मानेहैं। जिसपरभी क्षय मासमें दीवालीपर्वादि धर्मकार्य करते हैं। और अधिक महीनेमें पर्युषणापर्वादि धर्मकार्य नहीं करनेका कहतेहैं। यहतो प्रत्यक्षमेंही पक्षपातका झूठा आग्रहहीहै. सो आत्मार्थियोंको तो करनायोग्य नहींहै। इसलिये अधिकमहीनेमें और क्षयमहीनेमेंभी धर्मकार्य करने उचित हैं,इनमें कोईभी बाधा नहीं आसकती. इस बातकोभी विवेकीतत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे।

## ३६–वार्षिक क्षामणे;या प्राणियोंके कर्मबंधन; व आयु प्रमाणकी स्थिति; किस २ संवत्सरकी अपेक्षासे मानते हैं ?

जैनशास्त्रोंमें पांच प्रकारके संवत्सर मानेहैं, जिसमें नक्षत्रोंकी चालके प्रमाणसे ३२७ दिनोंका नक्षत्र संवत्सर मानतेहैं। चंद्रकी चालके प्रमाणसे ३५४ दिनोंका चंद्रसंवत्सर मानते हैं । फलफूलावृद्धि होनेमें कारणभूत ऋतु प्रतिबद्ध ३६० दिनोंका ऋतुसंवत्सर मानतेहैं। तथा जब अधिकमहीनाहोवे तब१३महीनोंके३८३दिनोंका अभिवर्द्धित संवत्सर मानतेहैं। और सूर्यके दक्षिणायन व उत्तरायनके प्रमाणसे ३६६ दिनोंका सूर्य संवत्सर मानतेहैं। और पांच सूर्यसंवत्सरोंके प्रमाणसेही१८३०दिनोंका एक युग मानतेहैं। इसी एक युगके १८३० दिनोंका प्रमाण पांचोंही प्रकारके संवत्सरोंके हिसाबसे मिलनेकेलियेही, एक युगमें दो चंद्रमास बढते हैं,सात नक्षत्रमास बढते हैं, और एक ऋतुमास घटताहै,तब सब मिलकर१८३०दिनोंका एक

युग पूराहोताहै. और एक युगके सभी दिनोंको अभिवर्द्धित महीनेके हिसावसे गिननेमेंआवें तवतो कुल ५७ अभिवर्द्धित महिनोसेही १ युग पूराहोताहै। इसलिये शास्त्रोंके नियमसे तो अधिकचंद्रमासके या अधिकनक्षत्रमासके किसीभी महीनेके एकदिनकोभी गिनतीमें निषेध करनेवाले तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके कथनके प्रमाणका भंग करनेवाले होनेसे,उन महाराजोंकी आशातनाके भागी वनतेहैं. क्योंकि चंद्रादि अधिकमहीनोंके दिनोंकीगिनती सहितही पांच वर्षोंके एक युगके १८३० दिनोंका प्रमाण पूरा होसकता है, अन्यथा कभी पूरा नहीं होसकता है.

और तिथि, वार, मास, पक्षादि व्यवहार चंद्रमासके हिसाव-से चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं। और प्राणियोंके कर्म वंधनकी स्थिति व आयुष्प्रमाणकी स्थिति सूर्यमासके हिसावसे सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासे मानतेहैं, इसलिये सूर्यसंवत्सरके हिसावसेही मास, अयन, वर्ष, युग, पूर्व, पूर्वांग, पल्योपम, सागरोपमादिकके काल प्रमाणसे ४ गतियोंके सर्वजीवोंके आयुका प्रमाण व आठोंही प्रकारके कर्मोंकी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टस्थितिके वंधका प्रमाण, और उत्सर्पिणी अवसर्पिणीकालसे कालचक्रकाप्रमाण, यहसर्ववातें सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं. इसकाअधिकार लोकप्रकाशादि शास्त्रोंमें प्रकटहीहै। और वार्षिकक्षामणे करनेका तो चंद्रमासके हिसावसे चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानते हैं, मगर चंद्रसंवत्सरके ३५४ दिन होतेहैं. तो भी व्यवहारिकरूढीसे एकवर्षके ३६० दिनकहनेमें आतेहैं. तैसेही जव महीना वढे तव उसवर्षके १३महीनोंके ३९०दिनकहनेमें आतेहैं. मगर कितनेक लोग ऋतु संवत्सरकी अपेक्षासे ३६० दिनोंके वार्षिक क्षामणे करनेकाकहतेहैं,परंतु ऋतु संवत्सर तो पूरे ३६० दिनोंका होताहै, उसमें कोईभी तिथिकेक्षय होनेकाअभावहै, व तीसरे वर्षमें महीना वढनेकाभी अभावहै,और चंद्रसंवत्सर ३५४ दिनोंका होनेसे संवत्सरीके रोज चंद्र संवत्सर पूरा होसकता है, मगर ऋतुसंवत्सर पूरा नहीं होसकताहै,और तिथि, वार, मास, पक्ष, वर्षका व्यवहारभी ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं चलता, किंतु चंद्र संवत्सरका अपेक्षासे चलताहै, और ऋतु संवत्सरके ३६० दिनतो संवत्सरीका पर्व हुए वाद ६ रोजसे दशमीको पूरे होतेहैं,और संवत्सरी पर्वतो ४ या ५ को करनेमें आता है, इसलिये वार्षिक क्षामणे ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं, किंतु चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासे कर

नेका समझना चाहिये. और ३५४ दिनें, या ३८३ दिने संवत्सरीपर्व होता है, तोभी ३६० दिन, या ३९० दिन कहनेमें आतेहैं, सो ऋतुसंवत्सरसंबंधी नहीं, किंतु चंद्र या अभिवर्द्धित संवत्सरसंबंधी व्यवहारसे कहनेमें आते हैं. देखो-चंद्रमासकी अपेक्षासे एक पक्ष १४ दिन ऊपर कुछ भाग प्रमाणे होता है, मगर पूरे १५ दिनोंका नहीं होता, तो भी व्यवहारमें लोकसुखसे उच्चारण करसकें; इसलिये १५ दिनोंका एकपक्ष कहनेमें आताहै। यह अधिकार ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै। इसीतरहसे महीनेके३०दिन या वर्षके३६०दिनभी व्यवहारकी अपेक्षासे समझने चाहिये, मगर निश्चय में तो जितने दिनोंसे संवत्सरीपर्वमें वार्षिक क्षामणे होवेंगे उतनेही दिनोंके कर्मोंकीनिर्जराहोगी, किंतु ज्यादे कम कभीनहीं हो सकेगी।

और संजलनीय, प्रत्याख्यानीय, अप्रत्याख्यानीय कषायकी अनुक्रमसे, एक पक्षके१५दिन, ४महीनोंके१२०दिन, व १२ महीनोंके३६०दिनोंके एक वर्षकी स्थितिकाप्रमाण शास्त्रोंमें बतलायाहै, सो, व्यवहारसे बतलायाहै, मगर निश्चयमें तो रागद्वेषादि तीव्र परिणामोंके अनुसार न्यूनाधिकभी बंध पडसकताहै. इसलिये उसकी स्थितीके प्रमाणकी गिनती सूर्य संवत्सरकी अपेक्षासे होती है। और क्षामणे तो चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासे व्यवहारसे करनेमें आतेहैं, सो ऊपरमें इसबात का खुलासा लिख चुकेंहैं। इसलिये एकवर्षके ३५४दिन होने परभी व्यवहारिक दृष्टिसे ३६० दिनोंके क्षामणे करनेका, और कषायादि कर्मोंकीस्थिति परिपूर्ण ३६० दिनतक निश्चय भोगनेका, दोनों विषय भिन्न २ अपेक्षासे, अलग२ संवत्सरोंसंबंधीहैं, इसलिये इन्होंके आपस में कोई तरहका विरोधभाव कदापि नहीं आसकता. जिसपरभी चंद्र संवत्सरसंबंधी व्यवहारिकक्षामणेकरनेका, और सूर्यसंवत्सरसंबंधी निश्चयमें कर्मोंकीस्थिति पूरेपूरीभोगनेका रहस्यको समझेबिनाही अधिकमहीनेके३०दिनोंको गिनतीमें लेनेका छोडदेनेकेलिये, अधिकमहीनेकोगिनतीमें लेवें, तो कषायकीस्थितिका प्रमाणबढजानेसे मर्यादा उल्लंघन होनेकाकहते हैं, सो शास्त्रोंके मर्मकोनहीं जाननेके कारणसे अज्ञानताजनक होनेसे सर्वथा मिथ्याहै. देखो-एकयुगके दोनों अधिक महीनोंके दिनोंकोगिनतीमें नहीलेवें तो सूर्यसंवत्सरका प्रमाणभीपूरा नहीं हो सकताहै, इसलिये दोनों अधिकमहीनोंके दिनोंको अवश्यमेव गिनतीमें लेनेसेही पांच सूर्यसंवत्सरोंके एक युगमें १८३० दिन पूरे होसकते हैं. इसलिये अधिकमहीना गिनतीमें कभी नहीं छुट सकता

और भी देखो-३५४ दिने संवत्सरी प्रतिक्रमण करें,तो भी व्यवहार में ३६०दिनोंकेक्षामणे करनेमें आतेहैं,मगर अप्रत्याख्यानीय कषायके ३६० दिनोंके एक वर्षकी पूरेपूरी स्थितिका निश्चयमें बंध पडा होवे वह बंध, ३५४ दिनोंमें (३६०दिनोंका) कभी क्षय न हो सकेगा,किंतु वो तो समय २ के हिसावसे पूरे पूरे ३६० दिनही भोगने पडेंगे। इ-सीतरहसे चौमासी, व पाक्षिककाभी भावार्थ समझलेना. इसलिये व्यवहारिक क्षामणे करनेके साथ निश्चय संबंधी कर्मबंधनकी स्थि-तिका दृष्टांतसे भोले जीवोंको मर्यादा उल्लंघन होनेका भय बतलाते हुए अपनी विद्वत्ताके अभिमानसे अधिकमहीना निषेध करना चा-हते हैं, सो प्रत्यक्ष शास्त्रविरुद्ध होनेसे सर्वथा अनुचित है।

## ३७— चूलिका संबंधी एक अज्ञानता ॥

कितनेक लोग शास्त्रोंके रहस्यको समझे विनाही कहतेहैं, कि-जैसे-एक लाख योजनके मेरुपर्वतमें उनकी चूलिका नहीं गिनी-जाती है, तैसेही १२ महीनोंके एक वर्षमें अधिकमहीनाभी नहीं गिना जाता। ऐसा कहकर अधिकमहीनेकी गिनती उडाना चाहते हैं,सो उन्होंकी आज्ञानताहै,क्योंकि एक लाख योजनके मेरुपर्वत ऊपर ४० योजनकी उंची चूलिका है,उसपर एक शाश्वत जिन चैत्य है, उनमें १२०शाश्वती श्रीजिनप्रतिमायें हैं, इसलिये ४० योजनकी चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित विशेषतासे एक लाख योजनके ऊपर४०यो-जनके मेरुपर्वतका प्रमाण क्षेत्रसमासादि शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै, तैसेही १२महीनोंके३५४दिनोंके एकवर्षके प्रमाण उपर अधिकमही-नेके ३०दिनोंकी गिनतीसहित ३८३दिनोंकोभी एक वर्षकी गिनतीमें लियेहैं, इसलिये चूलिकाके दृष्टांतसे अधिकमहीना गिनतीमें निषे-ध नहीं होसकता, मगर गिनतीमें विशेष पुष्ट होता है। औरभी दे-खो-पंचपरमेष्ठिमंत्र कहनेसे सामान्यतासे पांच पदोंके ३५ अक्षरों-का नवकार कहाजाताहै, मगर उसपरकी ४ चूलिकाओंके ४ पदोंके ३३ अक्षर साथमें मिलनेसे विशेषतासे नवपदोंके ६८ अक्षरोंका 'नवकार मंत्र' चूलिकाओंके प्रमाणकी गिनतीसहित कहनेमें आता है. इसी तरहसे दशवैकालिक व आचारांगसूत्रकी दो दो चूलिका-ओंका प्रमाणभी गिनतीमें आताहै. तैसेही सामान्यतासे एक लाख योजनका मेरुपर्वत,व १२महीनोंका एकवर्ष व्यवहारसे कहनेमेंआता है मगर विशेषतासे निश्चयमें तो चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित एक लाख चालीस योजनका मेरुपर्वत, व अधिक महीनेकी गिनती

सहित १३ महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहनेमें आताहै,सो सर्व शास्त्र प्रमाणोंसे प्रकटही है.इसलिये अधिक महीना व मेरुचूलिका वगैरह सब विशेषतासे गिनतीमें आतेहैं, जिसपरभी चूलिकाके नामसे अधिकमहीना गिनतीमें निषेधकरतेहैं, उनोंकी अज्ञानताहै ।

## ३८– पर्युषणा पर्व शाश्वत है; या अशाश्वत है ?

यद्यपि पांच भरतक्षेत्रोंमें व पांच ऐरवर्तक्षेत्रोंमें चौवीश तीर्थंकरमहाराजोंके शासनमें प्रथम और चौवीशवें तीर्थंकर महाराजके साधुओंको चौमासा ठहरने व पर्युषणापर्व करने संबंधी निज निज तीर्थकी अपेक्षासे तो पर्युषणापर्व अशाश्ववत है, मगर अनादि कालकी अपेक्षासे तो शाश्वतही है. इसलिये तीनों चौमासीपर्व;या पर्युषणापर्व; वा आसो, चैत्रकी ओलियोंका अट्ठाईपर्व आनेसे,भुवनपति-व्यंतर-ज्योतिषी और वैमानिक इंद्रादि असंख्य देव देवी, अपने समुदाय सहित देवलोक संबंधी अनंत सुखको छोडकर,आठवा नंदीश्वरद्वीपमें जाकर वहां शाश्वत चैत्योंमें श्रीजिनेश्वरभगवान्के शाश्वत जिनबिंबोकी जल-चंदन-पुष्पादिसे द्रव्यपूजा व स्तवन-नाटक वाजिंत्रादिसे भावपूजा करते हुए महोत्सव करके अपनी आत्माको निर्मल करते हैं । यह अधिकार श्रीजिवाभिगमसूत्र और उनकी टीकावगैरह बहुत शास्त्रोंमें खुलासा लिखा है. इसी प्रकार पर्युषणादि पर्व आराधन करनेकेलिये जैनीमात्र सर्वश्रावकोंकोंभी विशेषरूपसे धर्मकार्यकरने योग्य हैं, इसकाभी विशेष खुलासा ‘ पर्युषणा अट्ठाई व्याख्यान ’ में और कल्पसूत्रकी सर्वटीकाओंमें सर्वत्र प्रकटही है, इसलिये यहांपर विशेष लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है ।

## ३९ – पर्युषणाके विवाद संबंधी सत्यकी परीक्षा करो.

जिनाज्ञानुसार सत्यग्रहण करनेवाले आत्महितैषी सज्जनोंको निवेदन किया जाता है,कि– आगम-निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि-वृत्ति-प्रकरणादि प्राचीन और आजकालके पर्युषणा संबंधी सर्व शास्त्रोंके पाठोंका,व सभी गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनोंका इस ग्रंथमें मैने संग्रह किया है । और इस भूमिकामेंभी वर्तमानिक सभी शंकाओंका नंबर वार अनुक्रमसे समाधानभी खुलासापूर्वक करके बतलाया है. और इसग्रंथमेंभी अधिकमहीनेके ३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेवाले प्रत्येक लेखकोंके सभी लेखोंको पूरेपूरे लिखकर, पीछे उन सब लेखोंकी पंक्ति पंक्तिकी अच्छी तरहसे समीक्षा करके [ इसग्रंथमें ] खुलासापूर्वक बतलाया है, मगर पर्युषणा संबंधी

किसिभी लेखककी शंकावाली एकभी बातको छोडी नहीं है। इस-लिये इस ग्रंथमें वादी और प्रतिवादी दोनोंके सब पूरे लेखोंको,और आगम पंचांगीके सर्व शास्त्र पाठोंको; पक्षपात रहित होकर न्याय बुद्धिसे संपूर्ण वांचने वाले सत्यके अभिलाषियोंको अवश्यही जिना-ज्ञानुसार सत्य बातोंकी परीक्षा स्वयंही हो जावेगी. अल्पसंसारी आत्मार्थियोंके लिये तो इस ग्रंथमें लिखे मुजब इतना खुलासा बहु-तही है. मगर दीर्घ संसारी भारी कर्मोंकी तो बातही अलग है.

## ४०– जिनाज्ञाकी दुर्लभता।

जैसे–पूर्वदिशा तरफ कोई अपना अभीष्ट नगर होवे;उसमें जा-नेकेलिये थोडा २ भी पूर्व दिशा तरफ चलनेसे अवश्यही उस नग-रकी प्राप्ती होती है, मगर पूर्वदिशा छोडकर पश्चिम दिशामें बहुत २ चलें; तो भी वो नगर दूरदूरही जायगा, मगर नजदिक कभी न-हीं आसकेगा. इसी तरह जिनाज्ञानुसार थोडा२ धर्मकार्य किया हु-आभी मुक्ति रूपी अपना अभीष्ट नगरमें आत्माको पहुचाने वाला हो-ता है, परंतु जिनाज्ञा विरुद्ध बहुत२तपश्चर्यादि धर्म ध्यान व्यवहार में करें; तो भी तत्त्वदृष्टिसे शून्य होनेसे मुक्तिनगरमें पहुंचाने वाला नहीं होता. किंतु संसार बढाने वालाही होता है। और वर्तमानिक आग्रही लोगोंकी भिन्न २ प्ररूपणा होनेसे भोले भव्य भद्र जीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति होना अभी बहुत मुश्किल है.यही दशा पर्युषणासंबंधी विवादमेंभी हो गई है। इसलिये भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसार पर्युषणा जैसे अतीव उत्तम पर्वके आराधन होनेकी प्राप्ति होनेकेलिये आगम पंचांगी सम्मत,व सर्व लेखकोंकी शंकाओं का समाधान पूर्वक मैंने इसग्रंथमें इतना लिखा है। उसको अपने गच्छका आग्रह छोडकर तत्त्वदृष्टिसे पढनेवालोंको अवश्यही जिना-ज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति हो जावेगी.

और मनुष्य भवमें शुद्ध श्रद्धा पूर्वक जिनाज्ञानुसार धर्म कार्य करनेकी सामग्री मिलना अनंतकालसे अनंतभवोंमेंभी महान दुर्लभ है,वारंवार ऐसा सुअवसर कभी नहीं मिलसकता. इसलिये गच्छका पक्षपात, दृष्टिराग, लोकलज्जाकी शर्म, विद्वत्ताका झूठा अभिमान, जिनाज्ञाविरुद्ध अपने गच्छपरंपराकी रूढी, व बहुत समुदायकी दे-खादेखीकी प्रवृत्ति वगैरह बातोंको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यग्र-हण करनेमेंही आत्मसाधन होनेसे, नरकादि ४ गतियोंके जन्म-मर-ण-गर्भावास वगैरह अनंत दुःखोंसे छुटना होताहै, इसलिये, जिना-

ज्ञानुसार सत्यबातको समझेबादभी जानबुझकर भोलेजीवोंकोउन्मार्गमें गेरनेकेलिये विद्वत्ताके मिथ्याही अभिमानसे शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायविरुद्धहोकर झूठी २ कुयुक्तियें लगाना संसारवृद्धि व दुर्लभबोधिका कारण होनेसे आत्मार्थियोंको सर्वथा योग्य नहींहै।

## ४१ – पर्युषणापर्व ईधरके उधर कभी नहीं होसकते हैं.

कितनेक लोग जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करनेका मर्मभेद समझे विनाही कहतेहैं. कि-पर्युषणापर्व अधिकमहीनाहोवे तब५०दिने करो तोक्या,या ८० दिनेकरो तोभी क्या,मगर आगे या पिछे कभी करने चाहिये. ऐसा कहनेवाले सोने व पितल दोनोंको एकसमान बनानेकी तरह जिनाज्ञानुसार सत्य बातको, और जिनाज्ञा विरुद्ध झूठी बातको, एक समान ठहराते हैं। इसलिये उन्होंका कथन प्रमाणभूत नहीं होसकता, किंतु मोक्षके हेतुभूत जिनाज्ञानुसार ५० दिनेही पर्युषणा पर्वका आराधना करना अवश्यही योग्य है, मगर ८० दिने करना जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे कदापि योग्य नहीं ठहरसकता.देखो– जमालि वगैरहोंने जप, तप, ध्यान, आगमोंका अध्ययन, परोपदेश, क्रिया अनुष्ठानादि हमेशां बहुत २ किये थे, तोभी वे जिनाज्ञाविरुद्ध होनेसे संसार बढाने वाले हुए, मगर यही क्रिया अनुष्ठान जिनाज्ञानुसार करते तो निश्चय उसी भवमें मोक्ष प्राप्त करने वाले होते, इसलिये आत्मार्थी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारही ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करना योग्य है, मगर जिनाज्ञा विरुद्ध ८० दिने करना योग्य नहीं है। इसबातको भी विशेष तत्त्वज्ञ पाठक जन स्वयं विचार लेवेंगें।

## ४२ – पर्युषणा पर्वकी आराधना करनेके बदले विराधना करना योग्य नहीं है।

पर्युषणा जैसे आनंद मंगलमय परम शांतिके दिनोंमें जिनाज्ञानुसार धर्मकार्यकरके पर्वकी आराधना करते हुए, सर्वजीवोंसे मैत्रिभावपूर्वक शांततासे वर्ताव करना चाहिये। और वर्षभरके लगे हुए अतिचारोंकी आलोचना करके सबजीवोंके साथ भाव पूर्वक क्षमत क्षामणे करके अपनी आत्माको निर्मल करना चाहिये. जिसके बदले कितनेही आग्रही जन पर्युषणाकेही व्याख्यानमें सुबोधिका-दीपिका-किरणावली आदि वांचनेके समय;श्रीमहावीर स्वामीके छ कल्याणक भागमोंमें कहेहैं,उन्होंको व अधिकमहीनेके३० दिन गिनतीमें लिये हैं, उन्होंको निषेध करनेकेलिये, कितनीही जगहतो शास्त्रविरुद्ध, व

कितनीही जगह प्रत्यक्ष मिथ्या कथनकरके आपसमेंही विशेषरूपसे खंडन मंडनके झगडे चलातेहैं, और पर्वदिनोंमें सबजीवोंकी जगह केवल जैनीमात्रसेभी मित्रता नहीं रख सकते,उससे मैत्रीभावनाका भंग,विरोधभावकी वृद्धि,व खंडन मंडनसे रागद्वेष करके कर्मबंधन-का कारण करतेहैं। और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेसे जिनाज्ञाकी-भी विराधना करतेहैं, उससे परिणामोंकीभी मलिनता होनेसे पर्व दिनोंमें वर्षभरके अतिचारोंकी आलोचना करके आत्माको निर्मल करनेके बदले विशेषरूपसे मलिनकरतेहैं.और खंडन मंडनके झगडे-के लिये सबजीवोंसे क्षमत क्षामणे करनेके बदले अपनेसर्व जैनीभा-ईयोंसेही क्षमतक्षामणे नहींकरसकते. उससे अनंतानुबंधी कषायके उदयहोनेका प्रसंगआनेसे सम्यक्त्वकी व संयमकी विराधना होकर संसारभ्रमणका कारणकरतेहैं. इसलिये कर्मक्षयकारक महामंगलम-य शांतिके पर्वदिनोंके व्याख्यानमें श्रीमहावीरस्वामीके छ कल्याण-क आगमोंमें कहेहैं उन्होंको, व अधिकमहीनेके ३० दिनोंको सर्वशा-स्त्रोंमेंगिनतीमे लियेहैं, उन्होंको निषेधकरनेकेलिये खंडनमंडनके वि-वादके झगडे कितनेक तपगच्छके मुनिमहाराज जो व्याख्यानमें च-लातेहैं, सो पर्वकी विराधना करनेवाले,शांतिके भंग करनेवाले, अ-मंगलरूप अशांतिको बढानेवाले, व उत्सूत्रप्ररूपणासे संसार बढाने वाले होनेसे, तत्त्वदर्शी, विवेकी, आत्मार्थी भव भिरू, अल्पसंसारी सज्जनोंको अवश्यही छोडना योग्यहै । इस बातकोभी विशेष नि-ष्पक्षपाति पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं ।

## ४३--पर्युषणाके मंगलिक दिनोंमें क्लेशकारक अमं-गलिक करना योग्य नहीं है ।

यहबात व्यवहारसे प्रत्यक्ष अनुभवपूर्वक देखनेमें आती है,कि-मांगलिकरूप वार्षिक पर्व दिन सुखशांतिसे हर्षपूर्वक व्यतीत होवे, तो, वो वर्षभी संपूर्ण सुखशांतिसे व्यतीत होता है, मगर मांगलिक रूप पर्वदिनोंमें किसीके साथ विरोधभाव कलेश होकर अमंगलरूप अपशुकन होवे, तो वो वर्षभरभी चिंतासे कलेशमेंही जाताहै,इसलि-ये पर्वके दिनोंमें तो अवश्यही शांति रखना योग्य है। इसप्रकार व्य-वहारिक बातकेभी विरुद्ध होकर तपगच्छके अभी कितनेही मुनिम-हाराज पर्युषणा जैसेपरम मांगलिकके दिनोंमेंभी शांतिसे नहीं बैठ-ते,और सुबोधिका-दीपिका-किरणावली वगैरहके विवादवाले विष-य हाथमें लेकर श्रीमहावीरस्वामिके छ कल्याणक आगमपंचांगी अने-

क शास्त्रोंमें कहेहैं उन्होंकों, व अधिकमहीनेके ३० दिन सर्वशास्त्रोंमें गिनतीमेंलियेहैं,उन्होंकों निषेधकरनेकेलिये. अपने धर्मबंधुओंके सामने व्याख्यानमें अशांतिके हेतुभूत व अमंगलरूप आपसके खंडनमंडनसे विरोध भावके झगडे खडे करतेहैं, उससे ' जैसे राजा वैसी प्रजा ' की तरह यही गुण श्रावकोंमेंभी प्रवेश करताहै, इसलिये वर्ष भरके झगडे पर्युषणापर्वमें लाकर कलेशकरके विशेष कर्मबंधनकरतेहैं। इसलिये साधुओंके और श्रावकोंके दोनोंके आपसमें एक एककीनिंदाकरनेमें,अपनी झूठी २ बडाईकरनेमें,दूसरेका विगाडकरनेमें, या कोई शासन उन्नतिके कार्यकरेंतो उनकी साह्यता करनेके बदले उसमें कोईभी अवगुण बतलाकर उसका खंडन करनेमें इत्यादि अमंगलरूप कलेशके कार्योंमें सब वर्षचला जाता है। इसलिये दिनोंदिन शासनकी यह दशा होती हुई चली जातीहै। और इससे अपने आत्माके कल्याणमें व परोपकारके कार्योंमेंभी विघ्न आते हैं, इसलिये मंगलिकरूप पर्वके दिनोंमें अमंगलिकरूप खंडन मंडनसंबंधी विरोधभावको आपसमेंखडाकरना सर्वथाअनुचितहै.और अपनी सवाई जमानेकेलिये खंडनमंडन वैरविरोधके झगडेही करनेकी इच्छा होतोभी पर्वदिन छोडकर अन्यभी बहुतदिन मौजूदहैं,मगर पर्युषणा पर्व अराधन करनेकेलिये सर्व गच्छवाले श्रावक मुनिराजोंके पास उपाश्रय,धर्मशालामें आवें; उसवखत अपने आपसके खंडनमंडनके विरोधभाववालीबातकोंचलाना यह कितनी बडीअनुचितबातहै.और मंगलिकरूप पर्वदिन किसीप्रकारसेभी कलेशकारक खंडनमंडनके विरोधभावसे अमंगलिकरूप न बनाकर शास्त्रानुसार शांतिसेपर्वकाआराधन होवेंतो आत्माभी निर्मलहोवें,वर्षभी हर्षपूर्वक सुखशांतिसे जावे,बुद्धिभी अच्छी होवे. और आत्म साधन व परोपकारभी विशेषरूपसे होवे, संपसे शासन उन्नतिके कार्योंमेंभी वृद्धि होनेसे वर्तमानिक यह दशाकाभी शीघ्र सुधारा होवे. इसलिये वार्षिक पर्वरूप पर्युषणा शांतिमय सर्वजीवोंके साथ मैत्रिभाव पूर्वक आराधन करके उसमें मांगलिकके कार्यकरने चाहिये। और विरोधभावके कारणरूप खंडन मंडनके अनुचित बर्तावको छोडनाही अपनेको व दूसरे भव्य जीवोंकोंभी कल्याणकारक है। और शासनकी उन्नतिकाभी हेतुभूत है. इसबातको जो आत्मार्थी निकट भव्य होंगे, सो दीर्घ दृष्टिसे खूब विचारेंगे, और ऊपर मुजब शास्त्रविरुद्ध अनुचित व्यवहारको छोडकर शास्त्रानुसार संप शांतिका उचित व्यवहारको अवश्यमेवही ग्रहण करेंगे, व दूसरोंकोंभी ग्रहण करावेंगे।

## ४४ – अभीके झूठे आग्रही जनोंकी मलीन बुद्धि; और सम्यक्त्वी मिथ्यात्वीकी परीक्षा.

कोईभी वादविवादके विषयकी चर्चा करनेमें पहिले वाले सम्यक्त्वी आत्मार्थी होतेथे, वो तो तत्त्वार्थकी दृष्टितरफ विचारकरके सत्य बातग्रहण करतेथे और अपना पक्ष छोडनेमें किसीप्रकारकीभी हानीनहीं समझतेथे. श्रीगौतमस्वामि आदिगणधर महाराजोंकी तरह तथा श्रीसिद्धसेनदीवाकर, श्रीहरिभद्रसूरिजीवगैरह उत्तमपुरुषोंकी तरह. और अभीके झूठे अभिमानी अंतर मिथ्यात्वी हठाग्रही होतेहैं, वो तो शास्त्रोंकी बातको मनमें समझने परभी अभिमानसे सत्यबातको ग्रहणकरके अपनाझूठा पक्ष छोडनेमें बडीभारी हानीसमझतेहैं, आनंदसागरजी, शांतिविजयजी वगैरहोंकीतरह ( इसका खुलासा आगे लिखुंगा ) और शास्त्रोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर व्यर्थही झूठी २ कुयुक्तियें लगातेहैं, या विषयांतर करके सामनेवालेपर वा उनके समुदायपर विरोधभावको वढानेवाले आक्षेप करने लगजातेहैं। और मुख्यमुद्देके विवादको छोडकर निंदा ईर्षासे;राग, द्वेष करके विरोधभावसे अपनेको और दूसरोंकोंभी कर्मवंधन करानेमें हेतुभूत बनतेहैं. मगर झूठे आग्रहसे उत्सूत्रप्ररूपणा करके कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेसे वा राग, द्वेष,निंदा, ईर्षासे विरोधभाव करनेसे संसार वढनेकाभय नहीं रखते हैं, इसलिये अभीके झूठे आग्रही जनोंकी मलीन बुद्धि कही जातीहै. इसीप्रकार पर्युषणा संबंधीभी यह ग्रंथ वांचे बाद अब देखनेमें आवेगा, कि–५०दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाके विषयको छोडकर मासप्रतिबद्ध होली,दीवाली, दशहरा आदिके विषयांतरमें या अंगत आक्षेपकरनेमें कौन २ महाशय अपनेअंतरंग आत्माके कैसे२गुणप्रकाशित करेंगे,सो तत्त्वज्ञजनस्वयं देख लेवेंगे. इसलिये यहांपर अभीसे पहिले विशेषलिखनेकी कोई आवश्यकता नहींहै.

## ४५ – इस ग्रंथ संबंधी लेखकोंकों सूचना.

इस ग्रंथपर किसी तरहकाभी लेख लिखने वाले महाशयोंकों सूचना करनेमें आती है, कि–जैसे–मैंने इसग्रंथमें सुबोधिका-दीपिका-किरणावली वगैरहके विवादवाले प्रत्येक लेखोंको पूरेपूरे लिखकर पीछे शास्त्रानुसार व युक्तिपूर्वक उसकी समीक्षामें खुलासा करके बतलाया है, मगर विवादवाली एकभी बातको छोडी नहींहै. वैसे ही इसग्रंथपर लेख लिखनेवाले आप लोगभी इसग्रंथके प्रत्येक वि-

षयको पूरेपूरा लिखकर पीछे उसपर अपना विचार सुखसे लिखें, मगर शास्त्रोंके पाठोंवाली सत्यरबातोंके पृष्ठकेपृष्ठ छोडकर कहींकहींकी अधूरी २ बातें लिखकर;शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर संबंध विनाके अधूरे २ पाठ लिखकरके कुयुक्तियोंसे सत्य बातको झूठी ठहरानेका व भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेका उद्यम न करें. अन्यथा लेखकोंमें कितना न्याय व आत्मार्थीपनाहै, और सम्यक्त्वका अंशभी कितनाहै, उसकी परीक्षा विवेकी विद्वानोंमें अच्छी तरहसे हो जावेगा, और उसको सभामें सिद्ध करके बतलानेको तैयार होना पडेगा. फिर शास्त्रार्थ करनेमें मुह नहीं छुपाना विशेष क्या लिखें।

## ४६–उत्सूत्र प्ररूपणाके विपाक ॥

शास्त्रार्थ करनेको सभामें आमने सामने आनामंजूरकरना नहीं, व अपनाझूठा आग्रह छोडकर सत्य बातग्रहणभी करना नहीं. और विषयांतरकरके कुयुक्तियोंसे शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाकरते हुए दृष्टिरागी व भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेका उद्यम करते रहना. उससे दृष्टिरागी, पक्षपाती, अज्ञानी लोग चाहे जैसे पूजेंगे,मानेंगे, मगर "उसूत्त भासगा णं बाहि णासो अणंत संसारो" इत्यादि, तथा "सम्मत्तं उच्छिदीय, मिच्छत्तारोवणं कुणई निय कुलस्स ॥ तेण सयलो वि वंसो, कुणई मुह समुहो नीओ ॥ १ ॥" इत्यादि, देखो–शास्त्रविरुद्ध होकर उत्सूत्र प्ररूपणा करने वालेके बोधिबीज (सम्यक्त्व ) का नाश होकर अनंत संसार बढता है, और जिसने अपने कुलमें, गणमें (गच्छमें),समुदायमें सम्यक्त्वका नाश करनेवाली मिथ्यात्वकी प्ररूपणाकी होवे, वो अपने सब वंशको, गच्छको, समुदायकोभी, दुर्गतिमें गेरनेवाला होताहै। शिवभूति--लुंका--लवजी--भीखम वगैरह झूठे २ मत चलानेवालोंकी तरह इत्यादि भावको विचारो और संसारसे उदासीन भावधारण करनेवाले, आत्मार्थी, भव्यजीवोंको उन्मार्गका रस्ता बतलानेवाला 'शरणे आनेवालोंका विश्वासघातसे शिरच्छेदन करनेवालेसेभी' अधिक दोषी ठहरता है, और यह याद रखने योग्य बात है, कि–दृष्टिराग, लोकपूजा, मानता, व झूठा आग्रहका अभिमान परभवमें साथ न चलेगा. मगर उत्सूत्रप्ररूपक ८४लाख जीवायोनीका घात करनेवाला होनेसे उसके विपाक अवश्यही भवांतरमें भोगे बिना कभी नहीं छुटेंगे, इस बातपर खूब विचार करना चाहिये । और जिनाज्ञानुसार सत्यप्ररूपणा करके भव्य-

जीवोंको मुक्तिमार्गका रस्ता बतलानेवाले ८४ लाख जीवायोनीके स-र्व जीवोंको अभयदान देनेसे महान्पुण्यके भागी होते हैं, और अपने कुलको, गच्छको, समुदायकोभी सद्गतिके भागीबनातेहैं, व आपभी अपनी आत्माको निर्मल करके अल्पकालमें निर्वाण प्राप्तकरने वाले होतेहैं, श्रीगौतमस्वामी गणधरादि उपकारी महाराजोंकी तरह. इ-सलिये संसारसे डरनेवाले आत्मार्थियोंको झूठा आग्रह छोडकर व-गर विलंबसे सत्यग्रहण करना चाहिये। इस बातकोभी विशेष वि-वेकी निष्पक्षपाति पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे ।

## ४७- सुबोधिका-दीपिका-किरणावली वगैरहकी पर्युष-णा संबंधी तथा छ कल्याणक संबंधी शास्त्रविरुद्ध प्ररू-पणाकी भूलोंको सुधारनेकी खास आवश्यकताहै.

१- जैनपंचांगके अभावसे अभी महीना बढे तो भी " जैन टि-प्पणकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाषाढ एव वर्धते, नान्येमासास्तट्टिप्पणकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते, ततःपंचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः " इस वाक्यसे सुबोधिका-दीपिका-किरणावली इन तीनों टीकाकारोंने अपने तपगच्छकेही पूर्वाचार्यों-की आज्ञासे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा-पर्वकी आराधना करनेका लिखा है, फिर उसीकोही उत्थापन कर-नेके लिये शास्त्रविरुद्ध और अपने प्राचीन पूर्वाचार्योंकेभी विरुद्ध हो-कर कुयुक्तियोंका संग्रहकिया है, यह सबसे बडी प्रथम भूलकी है, उसको वगर विलंबसे खास सुधारनेकी आवश्यकता है ।

२- निशीथचूर्णिमें अधिकमहीनेको कालचूलाकहकरकेभीउसके ३०दिन पर्युषणासंबंधी दिन संख्याकी व्यवस्थामें गिनतीमें लिये हैं, उसको कालचूलाकेनामसे निषेद्ध किये सो यहभी दूसरी भूलकीहै ।

३-निशीथ चूर्णिके अधिक मासके अभाववाले५०दिनों संबंधी अधूरे पाठ भोलेजीवोंको बतलाकर अभी दो श्रावण होवे,तबभी जि-नाज्ञाविरुद्ध होकर ८०दिने पर्युषणा होनेका भय न करके भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका ठहराया सो भी तीसरी भूलकी है ।

४- अधिक महीनेके अभावमें सामान्यतासे पर्युषणाके पिछा-डी कार्त्तिकतक ७० दिन रहनेका कहाहै,उसको समझेविना अधिक महीना होवे तब विशेषतासे शास्त्रानुसारही १०० दिन होते हैं, उ-सकीजगहभी ७०दिन रहनेका आग्रहकिया सोभी चौथी भूलकीहै ।

५- पौष-आषाढ-श्रावणादि वढे तव शास्त्रानुसार या प्रत्यक्षमेंभी पांचमहीनोंसे फाल्गुन-आषाढ-कार्तिकमें चौमासीप्रतिक्रमण करनेमें आताहै, जिसपरभी श्रावणादि वढे तव आलोजमें ४ महीनोंसे चौमासी प्रतिक्रमण करनेका वतलाया सोभी पांचवी भूलकीहै।

६- पहिले मास वढताथा तवभी २० दिने वार्षिक कार्य पर्युषणा करतेथे, उनको सर्वथा उडादिये सो भी यह छट्ठी भूलकी है।

७- मास वढे तव १३ महीनोंके क्षामणे वार्षिक प्रतिक्रमणमें, तथा पांचमहीनोंके क्षामणे चौमासी प्रतिक्रमणमें हमलोगकरते हैं, तो भी मास वढे तव १२महीनोंके वार्षिक क्षामणे,तथा ४ महीनोंके चौमासी क्षामणेकरनेका प्रत्यक्ष झूठलिखा सोभी यह सातवां भूलकीहै.

८- पौष-चैत्रादिमहीने वढे तब शास्त्रप्रमाणमुजब और प्रत्यक्षमें भी १० कल्पी विहार होता है, जिसपरभी मास वृद्धिके अभावसंबंधी ९ कल्पी विहारकी वात वतलाकर मास वढे तवभी १० कल्पी विहारका निषेध किया सो भी यह आठवी भूलकी है।

९- अधिकमहीनेमें सूर्यचार होता है, जिसपरभी नहीं होनेका प्रत्यक्षही झूठ लिख वतलाया सो भी यह नवमी भूलकी है।

१०- श्रावणादि महीने वढे तव उनकी गिनती सहित प्रत्यक्षमेंही पांचवें महीनेके नवमें पक्षमें ४॥ महीनोंसे दीवालीपर्व करनेमें आता है, और कभी दो कार्त्तिकमहीने होंवे, तवभी प्रथम कार्तिक महीनेमें दीवाली पर्व करनेमें आता है. जिसपरभी दीवाली वगैरह पर्वोमें अधिक महीना नहीं गिननेका प्रत्यक्षही झूठ लिखा सो भी यह दशवी भूलकी है।

११- यज्ञोपवित,दीक्षा,प्रतिष्ठा,विवाह,सादी वगैरह मुहूर्त्तवाले कार्य तो अधिकमहीनेमें, क्षय महीनेमें, चौमासेमें, और सिंहस्थादि वहुतयोगोंमेंभी नहीं करते.मगर चौमासी पर्व व पर्युषणापर्वादि तो अधिकमहीनेमें, क्षयमहीनेमें, चौमासेमें. और सिंहस्थादिमेंही करनेमें आते हैं। जिसपरभी मुहूर्त्तवाले कार्योंकी तरह अधिक महीनेमें पर्युषणापर्व करनेकाभी निषेध किया सो यहभी जिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्रप्ररूपणारूप इग्यारहवी वडी भूलकी है.

१२- ५० दिने प्रथमभाद्रपदमें पर्युषणापर्व करने चाहियें, जिसके वदले दूसरे भाद्रपदमें करनेका लिखा सो ८०दिन होनेसे यहभी शास्त्रविरुद्ध वारहवी वडी भूलकी है।

१३- जैसे देवपूजा,मुनिदान,आवश्यकादि कार्य दिन प्रतिवद्ध हैं, वैसेही-पर्युषणापर्वभी ५० दिन प्रतिवद्धहैं,इसलिये जैसें-अधिक

महीनेके ३०दिन देवपूजा,मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें लिये जातेहैं, तैसेही–पर्युषणापर्व करने संबंधीभी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये जातेहैं,जिसपरभी पर्युषणापर्व करनेमें अधिक महीनेके ३०दिन नहीं गिननेका लिखा, सो भी यह तेरहवी वडी भूलकी है।

१४– अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति बढती है, व फूल, फलादिकभी प्रत्यक्षमें होतेहैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे बिनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा, सो भी यह चौदहवी बडी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप बहुत बडी २ भूलेंकी हैं, उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

---

## अब शासननायक श्रीमहावीरस्वामीके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संधंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।



१५– तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन-जन्मादिकोंको कल्याणक पना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो, या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्दअनेकार्थवालेहैं, तोभी तीर्थंकरमहाराजोंके चरित्रमें प्रसंगसे च्यवन-जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामीके तथा श्रीनेमिनाथ स्वामीके च्यवनादि पांच पांच कल्याणकोंकी तरहही श्रीमहावीरस्वामीकेभी च्यवनादि पांच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छठा निर्वाण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वककहाहै। जिसका मर्म समझे बिना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थमें च्यवनादि छ कल्याणकोंका निषेधकरनेके लिये छ वस्तु, या छ स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थकोउडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापनकरनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसेबडीपंदरहवी भूलकीहै.

१६– श्री महावीर स्वामीके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें भगवान्को देखेभी नहीं,और नमुत्थुणं वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं. और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्को देखेहैं, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु णं' किया.और हरिणैगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवायेहैं, तब त्रिशलामातानें असोजवदी १३ कोरात्रिको तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं। और कलिकाल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचंद्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहावीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु णं'किया और हरिणैगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, तथा धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयीहैं। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हैं। उसका भावार्थ समझे बिनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहै,इसलिये राज्याभिषेकको जन्म-दीक्षादि कोईभी कल्याणक नहीं मानसकते हैं, परंतु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजनें किया, और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया,उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहै, उसका भावार्थ समझेबिनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना,या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

सोभी गर्भापहाररूप दूसरे च्यवनकल्याणकके और राज्याभिषेकके, भावार्थको समझे बिना व्यर्थही यह सोलहवीभी बडी भूलकीहैं।

१७- जैसे श्रीमल्लीनाथस्वामी स्त्रीत्वपनेमें तीर्थंकर उत्पन्नहुएहैं. सो विशेषतासे प्रसिद्धहीहै,तोभी चौवीश तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे श्रीमल्लीनाथ स्वामीकोभी पुरुषत्वपनेमें कहनेमें आतेहैं. मगर उसमें सामान्य विशेष संबंधी अपेक्षाकी भिन्नता होनेसे इनबातके आपसमें कोईतरहका विरोधभाव नहींआसकताहै, तैसेही-श्रीमहावीरस्वामीकेभी विशेषतासे छ कल्याणक आचारांग, स्थानांग, कल्पसूत्रादि आगमोंमें कहेहैं,तो भी अतित,अनागत, और वर्तमान काल संबंधी भरतक्षेत्रके तथा ऐरवर्त क्षेत्रके सर्व तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे श्रीमहावीर स्वामीकेभी पांच कल्याणक 'पंचाशक सूत्रवृत्ति' में कहे हैं, मगर उनमें सामान्य विशेष अपेक्षाकी भिन्नता होनेसे इनके आपसमें कोई तरहका विरोध भाव कभी नहीं आ सकता है,तो भी आचारांग,स्थानांगादि आगमोंके छ कल्याणकों संबंधी विशेषताके और 'पंचाशक' के पांच कल्याणकों संबंधी सामान्यताके अभिप्रायको समझे बिनाही सामान्य पांच कल्याणकों संबंधी पूर्वापर संबंध बिनाका अधूरापाठ अल्पज्ञ भोलेजीवोंको बतलाकर आगमोंमें विशेषतापूर्वक छ कल्याणक कहे हैं, उन्होंका निषेध करनेके लिये आग्रह किया है, सो भी अज्ञानता जनक सर्वथा अनुचित यह सत्तरहवी भी बडी भूलकी है।

१८- आचारांग,स्थानांगादि मूल आगमोंमें च्यवनादि अलग २ छ कल्याणक खुलासा पूर्वक बतलायेहैं,और उन्होंकी टीकाओंमेंभी च्यवनादि कल्याणक अर्थकी सूचना करनेवाले पर्याय वाचक च्यवनादि छ स्थान बतलायेहैं.उनका तत्त्वदृष्टिसे भावार्थ समझेबिनाही च्यवनादिकोंको वस्तु या स्थान कहकर कल्याणकपनेका सर्वथा निषेध किया,सोभी अतीव गहनाशयवाले आगमोंके भावार्थका अजानपना होनेसे यहभी अठारहवी बडी भूलकीहै ।

१९-आषाढ शुदी ६ को भगवान् देवानन्दामाताकी कुक्षिमें आये, सो नीचगोत्रके कर्म विपाकका उदयरूप है,उसीकोही शास्त्रकारोंने आश्चर्यरूप अच्छेराकहाहै, तोभी उनको प्रथम च्यवनकल्याणक मानतेहैं.और नीचगौत्रका कर्मविपाक क्षय हुए बाद पीछे उंचगौत्रके कर्म विपाकका उदय होनेसे आसोज वदी १३ को त्रिशला माताकी कुक्षिमें उत्तम कुलमें भगवान् पधारेहैं तब अनादि कालकी मर्या

दामुजय तीर्थंकरमहाराजोंकी माताओंके गर्भमें तीर्थंकरउत्पन्न होने-
की सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखनेकी तरहही त्रिशलामाता-
नेंभी१४महास्वप्न आकाशसे उत्तरतेहुए देखेहैं,इसलिये यहतो दूसरा
च्यवनरूप कल्याणकपना प्रत्यक्षमेंही सिद्धहै। उन्हींको नीच गौत्रका
विपाकरूप और आश्चर्यरूप कहकर कल्याणक पनेका निषेध किया
सो यहभी एकोणवीशवीभी बडी भूलकी है।

२०–जैसे देवलोकसे देवभव संबंधी आयु पूर्ण होनेपर वहांसे
च्यवनरूप कारणहोनेसे माताकेगर्भमें उत्पन्नहोनेरूप(अवतारलेनेरूप)
कल्याणकपनेका कार्यहोताहै, तो भी कारणमें कार्यका उपचार होने
से च्यवनकोही कल्याणकपना कहनेमें आता है. तैसेही–गर्भापहार-
रूप कारण होनेसे तीर्थंकरपनेमें प्रकट होनेके लिये गर्भसंक्रमणरूप
(अवतारलेनेरूप)दूसराच्यवनरूप कल्याणकपनेका कार्यहुआहै.तोभी
कारणमें कार्यकाउपचार होनेसे गर्भापहारको कल्याणकपना कहनेमें
आताहै.इसलिये उनको गर्भापहार कहो, गर्भसंक्रमण कहो, त्रिशला-
कुक्षिमें अवतार लेनेका कहो, या दूसरा च्यवनरूप कल्याणक कहो,
सबका तात्पर्यार्थसे भावार्थ एकही है.इसलिये इनके आपसमें किसी
तरहका विरोधभाव नहींहै.इसप्रकार तीर्थंकरपनेमें प्रकटहोनेकेलिये
त्रिशलामाताके गर्भमें अवतारलेनेरूप गर्भापहारके अतीव उत्तम का-
र्यके भावार्थको समझे विनाही गर्भापहारको अतिनिंदनीक कहते हैं,
सो तीर्थंकरभगवान्के अवर्णवाद बोलनेरूप ( आशातना करनेरूप )
दुर्लभबोधि पनेकी हेतुभूत यहभी वीशवी बडी भूलकी है।

२१– जैसे–श्रीआदीश्वर भगवान् १०८ मुनियोंके साथ एक स-
मयमें अष्टापदपर्वत ऊपर मोक्ष पधारे हैं, उनको आश्चर्यरूप अच्छेरा
कहतेहैं,तोभी उन्हींकोही मोक्षकल्याणकभी मानतेहैं, तथा श्रीमल्लीना-
थस्वामीके जन्म, दीक्षा, व केवलज्ञानकी उत्पत्ति वगैरह सर्व कार्य
स्त्रीत्वपनेमें हुएहैं,उन्होंको आश्चर्यकारक अच्छेरेकहतेहैं, तोभी उन्हों-
कोही जन्म, दीक्षादिक कल्याणकभी मानतेहैं । तैसेही श्रीमहावीर-
स्वामिके गर्भापहारकोभी आश्चर्यकारक अच्छेराकहतेहैं,तो भी उनको
दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपनाभी माननेमें आताहै, उसका आशय
समझे विनाही गर्भापहारको आश्चर्यकहके कल्याणक पनेका निषेध
किया सो भी अज्ञानताजनक यह एकवीशवीभी बडी भूलकी है.

२२–जैसे श्रीसिद्धसेनदीवाकरसूरिजी महाराजने उज्जयनीनगरी
में दबी हुई श्रीअवंतिपार्श्वनाथजीकी प्राचीनप्रतिमाको फिरसे प्रकट-

की, तथा गुजरात देशमें अणहिलपुरपाटणमें शिथिलाचारी चैत्यवासियोंने संयमधर्मको दवा दियाथा, उसको श्रीजिनेश्वरसूरिजी महाराजने वहां जाकर फिरसे प्रकट किया और श्रीनवांगीवृत्ति कारक खरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजने श्रीस्थंभनपार्श्वनाथजीकी प्राचीनप्रतिमाको फिरसे प्रकटकी. तैसेही-कल्प, स्थानांग, दशाश्रुतस्कंध, आचारांगादिआगमोंमेंकहेहुए श्रीमहावीरस्वामीकेच्यवनादि छ कल्याणकोंको मेवाडदेशमें चितोडनगरमें शिथिलाचारी, लिंगधारी, चैत्यवासियोंने दवा दियेथे, उन्होंकोंही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजने वहां जाकर फिरसे प्रकट किये हैं. सो शास्त्रविरुद्ध नवीन नहीं, किंतु आगमोक्त प्राचीनही हैं. जिसकाभी भावार्थ समझे विनाही नवीन प्रकट करनेका कहतेहैं, सो भी अज्ञानताजनक प्रत्यक्ष ही मिथ्या भाषणरूप यह बावीशवींभी बडी भूलकी है ।

२३- जैसे-अभी वर्तमानिक गच्छोंके पक्षपाती लोग अहमदावाद वगैरह शहरोंमें अपने गच्छके उपाश्रय वा धर्मशाला वगैरह मकान खालीपडेहोंवें, तोभी अन्यगच्छवाले शुद्धसंयमीमुनियोंको उस मकानमें ठहरने नहीं देते, और यति लोगभी अपने गच्छके आश्रित भगवान्के मंदिरमें अन्य गच्छकेयतिको स्नात्र महोत्सवादि पूजापढाने नहीं देते. जिसपरभी अन्यगच्छवाला कोई यति अपनेगच्छके आश्रित मंदिरमें स्नात्रमहोत्सवादि पूजापढानेको आवे, तो वो लोग मरणे-मारणे शिरफोडनेको तैयार होतेथे, और कहतेथे, कि-'ऐसा कभी पाहिले हुआ नहीं और अभी होने देंगेभी नहीं.' यहबात गच्छोंके विरोधभावसे मारवाड, गुजरात वगैरहदेशोंमें पहिले प्रसिद्धहीथी और कोई शहरोंमें अबीभी देखनेमें आतीहै। इसी तरहसेही पहिले चैत्यवासी लोगभी आपसके द्वेषसे या लोभदशासे अपने गच्छके आश्रित मंदिरमें अन्यगच्छवालेको स्नात्रपूजा महोत्सव, प्रतिष्ठादि कार्य नहीं करनेदेतेथे. उस अवसरमें श्री जिनवल्लभसूरिजी महाराजभी गुजरातदेशसे विहार करके मेवाडदेशमें विशेषलाभ जानकर जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी चैत्यवासियोंका अविधिमार्गका निषेध करतेहुए; जिनाज्ञानुसार विधिमार्गका उपदेशद्वारा स्थापन करतेहुए, भव्यजीवोंके उपकारकेलिये चितोडनगरमें पधारे. तब वहांवाले चैत्यवासियोंनें और उन्होंके पक्षपातिभक्तलोगोंने अपनीभूल प्रकटहोनेके भयसे महाराजको शहरमें ठहरनेकेलिये कोईभीजगह नहीं दिया और द्वेषबुद्धिसे चामुंडिका देवीके मंदिरमें ठहरनेका वतलाया, तव महाराज तो दे-

योंकी आज्ञा लेकर वहांही ठहरे. उनके संयमानुष्ठान,जप,तप,ध्यान, धैर्य,ज्ञानादि गुण देखकर देवीभी प्रसन्न होकर जीवहिंसा छोडकर,जीवदया पालनेवाली व महाराजकीभक्ति करनेवाली होगई. और शहरवालेभी पुण्यवान् भव्यजीव जिनाज्ञानुसार सत्यधर्मकी परीक्षाकरनेको यहां महाराजकेपास थोडे२ आनेलगे. और अन्य दर्शनियोंमेंभी महाराजके विद्वत्ताकी बडी भारी प्रसिद्धि होनेसे बहुत लोग अपना संशय निवारणकरनेकेलिये महाराजकेपास आनेलगे, शहरभरमें बहुत प्रसंशाहोनेलगी, तब कितनेक गुणग्राही श्रावकलोगभी महाराजको गीतार्थ, शुद्ध संयमी और शास्त्रानुसार विधिमार्गकी सत्यबातें बतलानेवाले जानकर,चैत्यवासियोंकी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाकी तथा चैत्यकी पैदाससे अपनी आजीविका चालनेकी स्वार्थीकल्पितबातोंको छोडकर महाराजकेपास शास्त्रानुसार सत्यबातोंको ग्रहण करनेवाले होगये। पीछे महाराजका चौमासाभी यहां करवाया, तब तो महाराज चैत्यवासियोंकी शिथिलता और अविधिको खूबजोरशोरसे निषेध करने लगे और जिनाज्ञानुसार विधिमार्गकी सत्यबातें विशेषरूपसे प्रकाशित करने लगे, उसको देखकर बहुत भव्य जीव चैत्यवासियोंकी मायाजालसे छूटकर शास्त्रानुसार क्रिया अनुष्ठान करने लगे. तबतो चैत्यवासी लोग महाराज ऊपर बहुत नाराज होगये और अपनी शास्त्रविरुद्ध भूलोंको सुधारनेके बदले पांचसौ चैत्यवासी इकट्ठे होकर लकडीयें वगैरह हाथमें लेकर महाराजको मारनेके लिये आये,इसबातकी अच्छे २ आगेवान श्रावकोंद्वारा चितोडनगरके राजाको मालूम पडनेसे महाराज ऊपरका यह उपसर्ग वहांके राजाने दूर किया,चैत्यवासी लोग बहुत द्वेष करतेथे और नगर भरके सबमंदिर चैत्यवासियोंके ताबेमेंथे.उसअवसरमें महाराज श्रावकोंके साथ श्रीमहावीरस्वामीके दूसरेच्यवन कल्याणकसंबंधी आसोजवदी १३को चैत्यवासियोंके मंदिरमेंदेववंदनादि करनेको जानेलगे,तब पहिलेके विरोधभावके कारणसे राज्यमानआगेवान् बहुतश्रावकलोग साथमेंथे,इसलिये चैत्यवासीलोगतो कुछभी बोलसके नहीं,मगर एक चैत्यवासीनीबुढिया अपनेस्त्रीजातीके तुच्छस्वभावसेअपनेगच्छकेआश्रित भगवान्के मंदिरकेदरवाजेपर आडी सोगई और क्रोधसे बोलने लगी कि-'पहिले ऐसा कभीहुआनहीं और यहअभी करतेहैं, सो मेरे जीवतेतो मंदिरमें नहींजानेदूंगी; मेरेकोमारकर पीछे भले अंदरजावो

ऐसा उस चैत्यवासीनी बुढियाका क्रोधसहित अनुचित वर्त्तावकोदे-
खकर; यद्यपि श्रावकलोग उसको दरवाजेसे हटाकर मंदिरमें दर्शन
करनेको जासकतेथे, तो भी स्त्रीकेसाथ वैसा करना योग्य न समझ-
कर महाराजके साथ पीछे अपने स्थानपर चले आये. इत्यादि 'गण
धर सार्धशतक' बृहद्वृत्ति वगैरहमें श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज
के चरित्रसंबंधी पूर्वापरके आगे पीछेके प्रसंगको,व चितोडके निवा
सी चैत्यवासियोंके विरोधभावको, विवेकी बुद्धिसे समझे विनाही
अथवा तो जान बुझकर आगे पीछेके संबंधको छुपाकरके कितनेक
लोग कहतेहैं, कि—'श्रीजिनवल्लभसूरिजीने चितोडनगरमें छठे क-
ल्याणककी नवीन प्ररूपणाकरी तब उनको बुढियाने मना किया था
तोभी मानानहीं.'ऐसाकहनेवाले अपनी अज्ञानताकोही प्रकटकरतेहैं,
क्योंकि देखो–वो चैत्यवासीनी बुढिया अज्ञानी आगमोंके भावार्थको
नहीं जाननेवालीथी,तथा शिथिलाचारी होकर अपनी आजीविकाके
लिये चैत्यमें ठहरकरके चैत्यकी पैदाससे अपना गुजरान करती थी
और श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज चैत्यमें [मंदिरमें] रहनेका, तथा
उसकी पैदाससे अपनी आजीविका चलानेका निषेध करने वालेथे;
और शास्त्रानुसार व्यवहार करने वाले शुद्ध संयमीथे. इसलिये चि-
तोडके सब चैत्यवासियोंकी तरह वह बुढियाभी महाराजसे विशे-
ष द्वेष धारण करने वाली थी. और बुढियाके जन्म भरमेंभी उसके
सामने कोईभी शुद्ध संयमी चैत्यवासका निषेध करनेवाला चितोड
नगरमें पहिले कभी नहीं आयाथा. उससेही शास्त्रानुसार विधिमा-
र्गकी बातोंकी उसको मालूम नहींथी. इसलिये इन महाराजका आ-
गमानुसार छठे कल्याणकका कथनभी उस बुढियाको नवीन मालू-
म पडा. और अपने चैत्यनिवासकी तथा उससे अपनी आजीविका
चलानेकी बातका खंडन करने वाला और अपनी शिथिलाचारकी
भूलोंको प्रकट करनेवाला, ऐसा अपना विरोधी अपने तावेके मंदि-
रमें अपने सामने चला आवे, सो उस बुढियासे सहन नहींहोसका.
इसलिये क्रोधसे मंदिरके दरवाजे पर आडी पड गई, सो उस
निर्विवेकी अज्ञानी क्रोधसे विरोध भावको धारण करनेवाली बुढि-
याके कहनेसे प्रत्यक्ष आगम प्रमाण मौजूदहोनेसे छठा कल्याणक नवी-
न कभी नहीं ठहर सकता.जिसपरभी उस बुढियाके अज्ञानताजनक व-
चनोंका भावार्थ समझे विनाही उस चैत्यवासीनी बुढियाकी परंपरा-
वाले अभी वर्तमानमेंभी कितनेक आग्रही जन अज्ञानतासे बुढियाकी

तरह द्वेष बुद्धिसे, छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणा करनेका श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजपर झूठा दोष आरोपण करतेहैं. मगर प्रत्यक्षपने आगम प्रमाणोंको उत्थापन करके मिथ्याभाषणसे वेचीशवी यह भी वडीभूल करके विवेकी तत्त्वज्ञ विद्वानोंके सामने अपनी लघुता होनेका कारण करतेहुए कुछभी विचारनहींकरते, यह कितनी वडी लज्जा ( शर्म ) की वात है. सो भी विचारने योग्य है।

औरभी एक प्रत्यक्ष प्रमाण देखिये — श्रीअंतरिक्षपार्श्वनाथजी महाराजकी यात्रा करनेकेलिये मुंबईसे संघगयाथा, उनके साथमें आनंदसागरजी आदि साधुजीभीथे, सो रस्तामें संघके दर्शनकरनेकेलिये साथमें श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की प्रतिमाथी. उनको वहां संघ ठहरे तव तक संघ चाले मंदिरमें विराजमान करनेलगे, सो दिगंवर लोगोंने मना किया, जव उनके सामने जवराई करनेको गये. तव आपसमें मारपीट हुई, शिर-फुटे, कोर्ट कचेरीमें गये, दंडहोनेका या कैदमें जानेका मोका आया, हजारों रुपयें संघके खर्च हुए, तव साधू लोग छूटे, और आपसमें विरोधभाव वढा, तथा शासन हिलनाभी वहुत हुई, इस पर अव विचार करना चाहिये, कि--उस समय संघवाले तथा संघकेसाथ आनंदसागरजी वगैरह साधु लोगभी विवेक वाले होते, तो व्यर्थ हठकरके तकरार खडी न करते, तो इतना नुकसान कभी उठाना नहीं पडता. इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजभी व्यर्थ तकरार न होनेके लिये वुढियाका हठ देखकर वहांसे पीछे चले आये, सो तो दीर्घदृष्टिसे विवेकता पूर्वक वहुतअच्छा काम कियाथा. जिसके वदले उनको झूठे ठहरानेका दोष लगाना यह कीतनी वडी अज्ञानताहै।

और न्यातन्यातमें, गांवगांवमें, देशदेशमें, अपने २ पाडोसीपाडोसीमें, पंचपंचायतमें, राजदरवारमें, या गच्छगच्छमें व अंधपरंपरारूढीकी खोटी प्रवृत्तिमें, आपसके विरोधभाव संवंधी " ऐसा पहिले कभीहुआनहीं, और अभी यह ऐसा करते हैं, सो कभी होने देंगे भी नहीं" इस तरहसे कहनेकी एक प्रकारकी प्रचलीत रूढीहीहै, उसमें सत्यासत्यकी परीक्षा किये विना किसीको झूठा ठहराना यह सर्वथा निर्विवेकताहै. इसी तरहसे उन चैत्यवासीनी वुढियानेंभी अपने आग्रहसे वैसा कहाथा, उसका भावार्थ समझेविनाही छठे कल्याणकको नवीन ठहराना, सोभी यह आगमोंके उत्थापनकरनेरूप तथा श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजपर झूठादोष आरोपणकरनेरूप व अज्ञानताजनक वडीभारीभूलहै. इसवातकोविशेष पाठक स्वयं विचार लेंगे.

२४- देवानंदामाताकेगर्भमें ८२ दिनगयेबाद त्रिशलामाताकेगर्भमें आनेको च्यवनकल्याणकपना प्रकटतयासिद्धकरनेकेलियेही खास कल्पसूत्रमें च्यवनकल्याणकके सर्व कार्य देवानंदामाता संबंधी वर्णन नहीं किये, किंतु त्रिशलामाता संबंधी वर्णन कियेहैं; तथा श्रीसमवायांगसूत्र वृत्तिमेंभी देवानंदामाताके गर्भसे ८२ दिनगये बाद त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको अलग २ भव गिनतीमें लियेहैं, और कल्पसूत्र तथा उन्हींकी सर्व टीकाओंमें तथा श्रीवीरचरित्रादिअनेकशास्त्रोंमेंभी देवानंदामाताकेगर्भमें८२दिन गयेबाद आसोजवदी१३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आयेहैं, यह अधिकार बहुतविस्तार पूर्वक खुलासाके साथ कथन किया है, इसलिये देवानंदामाताकी कुक्षिसे जन्म होनेके बदले त्रिशलामाताकी कुक्षिसे जन्म होने संबंधी किसी तरहकीभी असंगतिरूप शंकाकभी नहींहोसकती. जिसपरभी असंगतिरूप शंका निवारण करनेकेलिये गर्भापहारका नक्षत्र बतलानेका कहकर उनमें अलग२भव गिनने, व १४महास्वप्नदेखनेवगैरह सर्व बातोंको उडाकर दूसराच्यवनरूप गर्भापहारको कल्याणकपने रहित ठहरातेहैं, और उनको बहुततुच्छ समझकरबडीनिंदाकरतेहैं, सो भी मायावृत्तिसे तीर्थंकरभगवान्की आशातनाकरनेरूप चौवीशवी बडीभूलकी है.

२५- श्रीऋषभदेव आदि तीर्थंकरमहाराज पहिले होगये, तथा श्री सीमंधरस्वामि आदि वर्तमानमें हैं, उन्हीं सबीने श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणक कथनकियेहैं, उन्हींकेही अनुसार गणधर-पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंनेभी आचारांग, स्थानांगादि आगमोंमेंभी च्यवनादि छ कल्याणक कथनकियेहैं, उसीकेही अनुसार तपगच्छके पूर्वज वडगच्छके श्रीविनयचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके प्राचीन निरूक्तमें, तथा चंद्रगच्छके श्रीपृथ्वीचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके प्राचीन टिप्पणमें और श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी पट्टपरंपरामें उपकेश गच्छीय श्रीदेवगुप्त सूरिजीने कल्पसूत्रकी टीकामें इत्यादि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी खुलासा पूर्वक च्यवनादि छ कल्याणकलिखे हैं। उसीकेही अनुसार तपगच्छकेभी पूर्वाचार्य श्रीकुलमंडनसूरिजी वगैरहोंनेभी श्रीकल्पावचूरि आदिक ग्रंथोंमें च्यवनादि छ कल्याणकलिखे हैं, इसलिये श्री तीर्थंकर-गणधर-पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके प्राचीन समयसेही आगमानुसार आत्मार्थी सर्वगच्छवाले च्यवनादि छ कल्याणक माननेवाले थे, जिसपरभी आगमादि सर्व प्राचीनशास्त्रोंके प्रमाणोंको जान बुझकर छुपाकरके या अज्ञानतासे ' श्री जिनवल्लभसूरिजीने चितोडमें

छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणा करी' ऐसा कहकर जो लोग छठे क-ल्याणकका निषेध करते हैं. वो लोग तीर्थंकर, गणधर, पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और खास अपनेही तपगच्छकेभी पूर्वाचार्योंकीभी आ-शातना करनेवाले ठहरतेहैं, इसलिये आत्मार्थी भवभिरू विवेकी ज-नोंको तो छठे कल्याणकका निषेध करना सर्वथा योग्यनहींहै. मगर निषेध करनेवालोंनें यह पचीशवीभी बडी भूलकी है।

२६- सभा मंडलमें जाहिर व्याख्यान करते हुए परोपकारकेलिये सत्य बात प्रकट करनेमें अपनी स्वाभाविक प्रकृतिसे,सत्यके जोशमें आकर कितनेक वक्ता लोग चौकी,टेबल, या पाटापर जोरसे अपना हाथ पिछाडते हुए अपना मंतव्य प्रकट करतेहैं, तथा कितनेक छा-ती ठोकते हुए, या भुजा आस्फालन करते हुए, अपनी सत्यबात प्र-कट करतेहैं, और कोई विशेष प्रबल विद्वान् वादी तो हाथमें खूब उंचा झंडा लेकर नगारेको पीटवाते हुए विवाद करनेकेलिये नगरमें उद्घोषणा करवाते हैं, मगर यह बात कोई प्रकारसे अनुचित नहींहै, किंतु सत्यबात प्रकाशित करनेमें अपनी हिम्मत बहादुरीकी स्वाभा-विक प्रकृति है। इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी सर्व शिथिलाचारी चैत्यवासियोंके सामने चैत्यवासका निषेध व आग-मानुसार श्रीमहावीरस्वामिके छ कल्याणक मानने वगैरह विषयों सं-बंधी सत्यबातें प्रकाशित करनेमें अपनी हिम्मत बहादुरीसे भुजास्फा-लन पूर्वक कहाथा,कि-'चैत्यवास निषेधादिक ऊपरकीबातें जो न मा ननेवाले होवें,वो उन्होंकी शास्त्रार्थ करनेकी ताकत हो तो मेरे सामने आकर उन बातोंका शास्त्रार्थसे निर्णय करो' मगर उस समय किसी-भी चैत्यवासीकी महाराजके साथ शास्त्रार्थ करनेकी हिम्मत नहींहुई. तब महाराजने सब लोगोंके सामने ऊपर मुजब सत्यबातें प्रकाशित-की.इसीतरहसे 'गणधरसार्धशतक' बृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति वगैरहका भावार्थ समझे विनाही श्रीजिनवल्लभसूरिजीने 'स्कंधास्फालनपूर्वक' छठा कल्याणक नवीन प्रकट किया, ऐसा कहकर चैत्यवास निषेध वगैरह ऊपरकी सबबातोंका संबंध छुपाकर छठेकल्याणकको नवीन ठह राकरके जो निषेधकरते हैं,सो मायावृत्तिसे व्यर्थही भोलेजीवोंको उ-न्मार्गमें गेरनेकेलियेमिथ्याभाषणकरके यहभी छवीशवींबडीभूलकीहै.

२७-श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज चैत्यवासका खंडन करनेवा-लेथे, इसलिये चैत्यवासियोंने महाराजको शहरमें ठहरनेको जगह नहीं दी. और द्वेषबुद्धिसे चामुंडिका देवीके मंदिरमें ठहरनेका बतला-

था,तब महाराज तो वहांही ठहरकर अनेक प्रकारके कष्ट सहन करतेहुएभी भव्यजीवोंके उपकारकेलिये जिनाज्ञानुसार सत्यवातें लोगोंको वतलाते रहे, और चैत्यमें ठहरने वगैरह चैत्यवासियोंकी कल्पित वातोंका खंडन करते रहे, यह वात 'गणधर सार्धशतक' ग्रंथकी लघुवृत्ति तथा बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें खुलासा लिखी है। जिसपरभी ऊपर मुजब चैत्यवासियोंकीभूलोंको तथा जिनाज्ञानुसार सत्य वातोंके प्रसंगको मायावृत्तिसे छुपा करके 'आपना नवीन मत स्थापन करनेकेलिये चामुंडिकादेवीके मंदिरमें ठहरेथे' ऐसा प्रत्यक्ष मिथ्या लिखकर महाराजकी झूठी निंदा की, और दृष्टिरागी वाल जीवोंकोभी परम उपकारी युग प्रधान आचार्य महाराजके झूठ अवर्णवाद वोलनेवाले वनाये. यहभी सत्तावीशवी वडी भूलकी हैं।

२८ "यो न शेष सूरीणामज्ञातसिद्धांतरहस्यानाम्" इत्यादि 'गणधर सार्धशतक' ग्रंथकी १२२वीं गाथाकी लघुवृत्ति तथा बृहद्वृत्तिके यह वाक्य सिद्धांतकेरहस्यको नहीं जाननेवाले द्रव्यलिंगी चैत्यवासियों संवंधी है, मगर पहिले होगये उन सर्व पूर्वाचार्यौसंवंधी नहींहै, जिसपरभी 'पहिले जितने आचार्य होगये हैं, उन सबोंको सिद्धांतके रहस्यको नहीं जाननेवाले ठहराकर जिनवल्लभसूरिजीने छठा कल्याणक नवीन प्रकाशित किया'ऐसा अर्थ कहते हैं। सो अपनी विद्वत्ताकी लघुताकारक अपनी अज्ञानता प्रकट करतेहैं। क्योंकि 'शेष' कहनेसे सिद्धांतके रहस्यको जानने वाले सर्व पूर्वाचार्योंको छोडकर सिद्धांतके रहस्यको नहीं जानने वाले वाकीके अज्ञानियोंका ग्रहण होताहै, और 'अशेष' कहनेसे सर्वका ग्रहण होसकताहै,मगर यहांतो 'अशेष' शब्द नहींहै, किंतु 'शेष' शब्दहै, इसलिये सर्व पूर्वाचार्यौंका ग्रहण नहीं होसकता, जिसपरभी सर्वपूर्वाचार्यौंका ग्रहणकरतेहैं,सो 'शेष' शब्दके अर्थकोभी नहीं जाननेवाले अपनी अज्ञानतासे शास्त्रोंके खोटे २ अर्थ करके, यहभी अट्ठावीशवी वडी भूलकी है। इस वातकोभी विशेष विवेकी तत्वज्ञ विद्वान् लोग स्वयं विचार सकते हैं।

देखिये-खरतरगच्छ वालोंने अपने पूर्वाचार्यौंके चरित्रोंमें, जैसे-श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज संवंधी 'श्रीस्थंभन पार्श्वनाथ प्रकट कर्ता' तथा 'श्रीनवांगी वृत्ति कर्त्ता' वगैरह वातें,उन महाराजने जैनसमाजपर किए हुए उपकारोंकी यादगिरिकेलिये प्रशंसारूप लिखीहैं। तैसेही-श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज संवंधीभी 'दश सह

स्र नवीनश्रावक तथा चामुंडिका देवी प्रतिबोधक ' 'चैत्यवास शिथिलाचार निषेधक ' ' षट् कल्याणक प्रकट कर्त्ता ' वगैरह बातेंभी इन महाराजने जैनसमाजपर किये हुए उपकारोंकी याद गिरिकेलिये प्रसंशारूप लिखी हैं, सो नवीन कल्पित नहीं, किंतु शास्त्रानुसार प्राचीनहीहैं. इसलिये प्रसंशारूप लिखी हैं । जिसका मर्मभेद समझेविना, ' गणधर सार्द्ध शतक ' ग्रंथकी लघुवृत्ति तथा वृहद्वृत्तिके ' यो न शेषसूरीणां ' इत्यादि पाठोंके ऊपर मुजब सत्यअर्थोंको छुपाकरके अपनी मतिकल्पना मुजब खोटे खोटे अर्थकरके भोलेजीवोंको मिथ्यात्वके उन्मार्गमें गेरनेकेलिये धर्मसागरजीकी अंध परंपरावाले उनकी देखा देखी वर्तमानिक न्यायांभोनिधिजी, शास्त्र विशारदजी, न्यायविशारदजी, विद्यासागर न्यायरत्नजी, जैनरत्न, व्याख्यानवाचस्पति, आगमोद्धारक,गीतार्थ,वगैरह विशेषणोंको धारणकेरनेवाले आचार्य,उपाध्याय, प्रवर्त्तक,गणि,पन्यास,प्रसिद्धवक्ता, विद्वान् मुनिजनआदि सर्व ऐसेही अनर्थ करते हुए चले जातेहैं.और सामान्यविशेष बातका भेदसमझे विनाही सर्वतीर्थंकर महाराजों संबंधी'पंचाशक सूत्रवृत्ति'का पांच कल्याणकों संबंधी सामान्यपाठको आगे करके कल्प,स्थानांग,आचारांगादिमें विशेपता पूर्वक च्यवनादि छ कल्याणककहेहैं,उन्होंका निषेधकरनेकेलिये आगमोंके अनादिसिद्ध च्यवनादि कल्याणक अर्थको उडा देतेहैं. तथा जैसे यति-मुनि-साधु-अणगार शब्द एकार्थके भावार्थवालेहैं,तैसेही च्यवनादि वस्तु-स्थान-कल्याणक शब्दभी एकार्थके भावार्थवालेहैं, उसकाभेद समझे विना ही च्यवनादिकोंको वस्तु-स्थान कहकर कल्याणकपने रहित ठहराते हैं। मगर दीर्घदृष्टिसे विवेकबुद्धिपूर्वक शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय तरफ उपयोग लगाकर सत्य तत्त्व बातका कोईभी विचार नहीं करतेहैं,यह अंधपरंपराकी कितनी बडीभारी लज्जनीय अनुचित प्रवृत्तिहै. इसकोविशेष विवेकीतत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयंविचार सकतेहैं।

औरभी देखिये-विवेक बुद्धिसे खूब विचारकरीये, यदि-नीचगोत्र कर्मविपाकरूप तथा आश्चर्यरूप कहनेसे कल्याणकपनेका निषेध हो सकता होवे, तवतो आषाढशुदी ६ को देवानंदामाताके गर्भमें भगवानआये,सोही नीचगोत्र कर्मविपाकरूप होनेसे कल्पसूत्रादि शास्त्रोंमें उनको आश्चर्यकहाहै,इसलिये तुम्हारे मंतव्य मुजबतो उनकोभी कल्याणकपनेका निषेध हो जावेगा. और विशेष अधिक आश्चर्यकारक दूसरे च्यवनकी तरह प्रथमच्यवनभी कल्याणकपने रहित होनेसे दो-

षबाकीके ४कल्याणकही रहजावेंगे. और नीचगौत्रके विपाकरूप तथा आश्चर्यरूप कहते हुएभी प्रथम च्यवनको कल्याणकपना मानोंगे,तो-नीचगौत्र विपाकरूप और आश्चर्यरूप कहकर दूसरे च्यवनरूप गर्भापहारको कल्याणकपने रहित ठहराया सो प्रत्यक्षमिथ्या व्यर्थही झूठा आग्रह सिद्ध होवेगा. इसलिये ऐसे झूठे आग्रहसे भोले जीवोंको संशयरूप मिथ्यात्वके भ्रममें गेरकर भगवानकी आशातनाका हेतुभूत अनर्थ करना सर्वथा योग्य नहीं है. किंतु प्रथम च्यवनमें कल्याणकपना माननेकी तरहही दूसरे च्यवनमेंभी कल्याणकपना आगमादि शास्त्रप्रमाण तथा युक्तिसम्मत होनेसे आत्मार्थियोंको अवश्यही मान्यकरना उचितहै, इसको विशेष तत्त्वज्ञजन स्वयंविचारसकतेहैं।

औरभी प्रत्यक्ष शास्त्रप्रमाण देखिये–कल्पसूत्रकी सर्व टीकायें वगैरह बहुतशास्त्रोंमें श्रीजंबूस्वामिके निर्वाणगयेबाद दश(१०) वस्तु विच्छेद होनेका लिखाहै. उसमें-केवलज्ञान,केवलदर्शन, यथाख्यात-चारित्र,मुक्तिगमन वगैरह बातोंकोभी वस्तु कहाहै. और 'गुणस्थान-क्रमारोह'वगैरह शास्त्रोंमेंभी केवलज्ञान उत्पन्नहोनेको,तथा मुक्तिगमनको १३-१४ वा गुणस्थान कहाहै. इसी तरहसे इन शास्त्रप्रमाण मुजबभी तीर्थंकर भगवानके केवलज्ञान उत्पन्न होनेको तथा मुक्तिगमन निर्वाणको वस्तु कहो या स्थान कहो और उन्होंकोंही केवलज्ञान तथा निर्वाण कल्याणकभी मानो,तो भी इस बातमें कोई तरहका विरोधभाव नहींहै, इसलिये च्यवनादिकोंको वस्तु कहो, या स्थान कहो, वा कल्याणककहो, सबका तात्पर्यार्थसे भावार्थ एकहीहै. जिसपरभी वस्तु-स्थान कहकर कल्याणकपनेका निषेध करनेवाले अपनी अज्ञानतासे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करके भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरते हैं, और अपनी आत्माकोभी उत्सूत्र प्ररूपणाके दोषसे मलीन करते हैं. इसबातकोभी विवेकी तत्त्वज्ञजन स्वयं विचार सकते हैं।

और तीर्थंकरभगवानके च्यवनादिकोंको कल्याणकपना आगमानुसार अनादिसिद्धहै, उन्हीं च्यवनादिकोंको शास्त्रोंमें एक जगह स्थान कहे,दूसरी जगह वस्तु कहे, तीसरी जगह कल्याणक कहे, इससेभी वस्तु-स्थान-कल्याणक यह तीनों शब्द पर्यायवाचक एकार्थवाले सिद्ध होतेहैं जिसपरभी वस्तु-स्थान शब्द देखकर अनादिसिद्ध च्यवनादिमें कल्याणक अर्थको उडादेना सो अपने झूठे पक्षपातके आग्रहसे शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेरूप यह कितनी वडी भूल है इसको

आत्मार्थी विवेकी तत्त्वज्ञ पाठक जन स्वयं विचार सकते हैं।

छ कल्याणक संबंधी ऊपरके संक्षिप्त लेखसेभी जो आत्मार्थी सत्य ग्रहण करने वाले निकट भव्य होंगे, वह तो थोडेसेमेंही सार समझ लेवेंगे, कि-गर्भापहारको अलग भव गिननेसे तथा त्रिशलामाताने सर्व तीर्थंकर माताओंकी तरह आकाशसे उतरते हुए १४ महास्वप्न देखने वगैरह कार्योंसे दूसराच्यवनरूप कल्याणकपनेकी उत्तमताको छुपाकरके व्यर्थही छठे कल्याणककी निंदाकरना सर्वथा योग्यनहींहै और शास्त्रोंकेअर्थ बदलकरके उत्सूत्रप्ररूपणासे व कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंकोभी उत्तम कार्यके हेतुभूत गर्भापहारकी निंदा करवाने वाले बनवाकर तीर्थंकर भगवानकी आशातनासे भवहार जानेका कारण कराना कदापि योग्य नहींहै। ऊपरकी इन सब बातोंका विशेष निर्णय शास्त्रोंके संपूर्ण पाठोंके प्रमाणोंसहित इस ग्रंथके पृष्ठ ४५२ से ८२६ तक छप चुका है, सो तीसरे भागमें प्रकट होगा. उसके बांचनेसे सर्व शंकाओंका खुलासा समाधान अच्छी तरहसे होजावेगा।

और शासन नायक श्रीमहावीरस्वामि आदि सर्व तीर्थंकर महाराजोंके चरित्र-भव्यजीवोंको कर्मोंकी निर्जरा करानेवाले कल्याणकारक मंगलरूपही हैं, इसलिये पर्युषणाके मंगलिक पर्व दिनोंमें आत्मकल्याणके लिये बांचनेमेंआतेहैं. और श्रीमहावीरस्वामिके गर्भापहाररूप दूसरा च्यवनका कार्य तो त्रिशलामाता, सिद्धार्थपिता, व इंद्रमहाराज वगैरह सर्व जीवोंको कल्याण मंगलरूप हर्षका देनेवालाहुआहै। तथा उनका आराधन करनेवाले अल्पसंसारी आत्मार्थी भव्य जीवोंकोभी अभिमानरहित कर्मोंकी विचित्रताकी भावनासे कर्मोंकी निर्जरा करानेवाला कल्याणकारक मंगलरूपहोता है। मगर गर्भापहारके नाम सुननेमात्रसेही चमकउठनेवाले और उनको नीच गोत्रविपाकरूप, आश्चर्यरूप अतीवनिंदनीककहकरनिंदाकरनेवालोंको तीर्थंकरभगवानके अवर्णवाद बोलनेसेसंसारपरिभ्रमणके बहुतविशेष दुःख भोगनेवाकी होंगे, इसलिये उन्होंको वो कार्य अमंगलरूप अकल्याणरूप मालूमपडता होगा। इससे उनकार्यसे द्वेषरखकर वर्षोवर्ष पर्युषणाके मांगलिकरूप कल्याणकारक पर्वदिनोंके व्याख्यानमें उनकी निंदा करते हुए अकल्याणरूप अतिनिंदनीक ठहराकार तीर्थंकर भगवानकी आशातना करनेसे अपनेको और दूसरे भव्य जीवोंकोभी अकल्याणरूप दुर्लभबोधिका हेतुकरतेहैं, ऐसी २ अनर्थभूत अनुचित बातोंसेही 'सुबोधिका' नाम रक्खाहै। मगर वास्तविक में

जो 'दुर्लभबोधिका' नाम सिद्ध होताहै । इसबातको विशेष आत्मार्थी तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वंय विचार लेवेंगे ।

## एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडती हैं ॥

देखो-एक अधिकमहीना व छ कल्याणक उत्थापनकरनेसे उसकी पुष्टिकेलिये, अनेक शास्त्रोंके अर्थबदलनेपडे। अनेक जगह शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध आग्रह करना पडा। कितनीही जगह मिथ्या बातें भी लिखनी पडी। कितनीक जगह शास्त्रोंके आगे पीछे के संबंधवाले पाठोंको छोडकर विनासंबंधेक अधूरे २ पाठभी भोले जीवोंको बतलाकर अपनापक्षकी सत्यता बतलानेका परिश्रम करना पडा और कितनीही जगहतो शास्त्रोंकी, पूर्वाचार्योंकी व भगवानकी भी आशातनाके हेतुभूत अनुचित शब्दभी लिखने पडे. उसकाअनुभवतो सुबोधिक-किरणावलीआदिककी२८भूलोंवाले ऊपरकेलेखसे तथा इसभूमिकाके सबलेखपरसे और इस ग्रंथके अवलोकन करनेसे पाठकगणको अच्छी तरहसे होसकेगा, इसलिये 'एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडतीहैं' यह लोकरूढीकी कहावतकी बात ऊपरके विषयमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है।

इसप्रकार पर्युषणासंबंधी, व छ कल्याणक संबंधी अपना झूठा पक्ष स्थापन करनेकेलिये और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेकेलिये, शास्त्र विरुद्ध होकर विनयविजयजीने सुबोधिकामें, तथा जयविजयजीने दीपिकामें, और धर्मसागरजीने किरणावलीमें, ऊपर मुजब अनेक भूलें की हैं, उन्हीं भूलोंको तपगच्छके कितनेक आग्रही जन पर्युषणाके व्याख्यानमें वर्षोवर्ष वांचते हैं. उससे जिनाज्ञाकी विराधनाहोकर भवबढनेका व दुर्लभबोधिका हेतुभूत अनर्थ होताहै. इसलिये अल्पसंसारी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारसत्यबातोंकी प्राप्ति होनेरूप उपकारकेलिये उपरकी सब बातोंका खुलासा निर्णय इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आया है। उसको देखकर यदि शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणासे संसार परिभ्रमणका भय लगता हो तो उन भूलोंको सुधारो, व्याख्यानमें वांचनेका बंध करो, और सत्यबातोंको ग्रहण करो या बडोदा वगैरह किसीभी राज्य दरबारमें इन भूलोंसंबंधी श्रीगौतमस्वामिआदि गणधरमहाराज व सिद्धसेनदीवाकर, हरिभद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी तरह सत्य ग्रहण करनेकी प्रति-

ज्ञापूर्वक शास्त्रार्थ करनेको तैयारहो; हमने तो इनका सत्य निर्णय अच्छी तरहसे करलियाहै,तोभी इन शास्त्रार्थमें सत्यनिर्णय ठहरेगा सो मंजूर है, इसलिये जो महाशय ऊपरकी भूलोंसंबंधी शास्त्रार्थ करना चाहते होवें, वो अपनी सहीसे अपना प्रतिज्ञा पत्र जाहिर रूपसे हमको भेजें.समय, स्थान, नियम, साक्षि वगैरह की व्यवस्था तो सबके अनुकूल उसी राज्यके नियममुजब होसकेगी, विशेष क्या लिखें।

## पर्युषणा संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार.

१- जैनटिप्पणाके अभावसे लौकिक टिप्पणामुजब मास-पक्ष-तिथि-वर्ष वगैरह माननेका व्यवहार करना और पर्युषणादि धार्मिक कार्योंका व्यवहार जैन सिद्धांतोंके अनुसार करना. तथा जैनसिद्धांतोंके अनुसार या लौकिक टिप्पणाके अनुसारभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको दान, पुण्य, परोपकार, जप, तप, धर्म ध्यानादि करनेमें व ब्रह्मचर्य पालनेमें या देशविरती-सर्वविरती संयम पालनेमें, तथा कर्मबंधनकी स्थितिके प्रमाणमें और कर्मोंकी निर्जरा करने वगैरह कार्योंमें गिनतीमें लियेजातेहैं, तैसेही ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व का आराधन करनेमेंभी उसके३० दिन गिनतीमें लेकर खरतरगच्छ, तपगच्छादिकको कल्पसूत्रकी टीकाओंके " पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः" इसवाक्यमुजब अभी दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें५०दिने पर्युषणापर्वकरना, यही शास्त्रानुसार जिनाज्ञा है।

२- मास प्रतिबद्ध कार्य तो एक महीनेकी जगह दूसरे महीनेमेंभी करनेमें आवे, तो भी कोई शास्त्रमें उनका दोष नहीं बतलाया. मगर पर्युषणापर्व करनेमें तो ५०दिनकी जगह ५१दिनभी कभी नहींहोसकते, इसलिये बिनामुहूर्तवाले ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्वके साथ मास प्रतिबद्ध या मुहूर्त्त प्रतिबद्ध होली, ओली, दीवाली, दशहरा, अक्षयतृतीया,पौष-श्रावणादिक महिनोंके कल्याणकादितप,या यज्ञोपवित, दीक्षा, प्रतिष्ठा, विवाह सादी वगैरह कोईभी कार्योंका संबंध नहीं है। जिसपरभी दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व आराधन करनेकी चर्चामें मासप्रतिबद्ध या मुहूर्त प्रतिबद्ध कार्योंकी बात बीचमें लाते हैं. वो लोग पर्युषणापर्वकरने संबंधी शास्त्रकार महाराजोंका आशय नहीं जानने वाले होनेसे, शास्त्रोंकी आज्ञा विरुद्ध होकर व्यर्थही कुयुक्तियोंसे विषयांतर करके भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरते हैं।

३- अधिक महीनेके अभावसंबंधी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेके व उसकेपीछे ७० दिन रहनेके और १२ मासी क्षामणे वगैरहके सामान्यपाठोंको अधिकमहीना होवे तबभी आगेलाते हैं। और अधिकमहीनेसंबंधी "पञ्चाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः" कल्पसूत्रकी सर्व टीकाओंके इस विशेषपाठको, तथा स्थानांगसूत्रवृत्ति, निशीथचूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि, वृत्ति, पर्युषणाकल्पचूर्णि वगैरह शास्त्रोंके १०० दिन रहने संबंधीआदि विशेषताके पाठोंकी सत्यबातोंको छुपाकरके छोड देते हैं, सो यह सर्वथा अनुचित है।

४- धार्मिक कार्य करनेमें १२ महीनोंके सर्व दिन, या अधिक महीना होवे तब १३महीनोंकेभी सर्व दिन, वा क्षय महीनेकेभी सर्व दिन बरोबर समानही हैं, उनमें कर्मबंधनके संसारिक कार्य और कर्म निर्जराके धार्मिक कार्य हमेशा बराबर होते रहते हैं, इसलिये तत्त्वदृष्टिसे तो उनमेंसे एक समय मात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता. जिसपरभी कार्तिकादि क्षयमहीनेके ३० दिनोंमें दीवाली, ज्ञानपंचमी, चौमासी वगैरह धार्मिक कार्य करते हुएभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको तुच्छ समझकर वडी निंदा करते हैं, या कालचूलाके नामसे गिनतीमें छोड देनेका कहते हैं, सो सर्वथा जिनाज्ञाका उत्थापन करते हैं।

५— जैन ज्योतिषविषयसंबंधी प्ररूपणा आगमानुसार करनी और श्रद्धाभी उसीमुजबरखनी, परंतु अभी पडताकालमें जैनटिप्पणा बंध होनेसे उस मुजब व्यवहार नहींकरसकते. और लौकिकटिप्पणा मुजब व्यवहार करनेमें आता है। इसलिये अभी जैन शास्त्रमुजब पौष-आषाढ अधिक होनेसंबंधी पाठ बतलाकर लौकिक टिप्पणासंबंधी चैत्र;श्रावणादि अधिकमहीनें मान्यकरनेका निषेध नहीं करसकते। और जैसे जिनकल्पी व्यवहार अभी विच्छेद है तोभी उन्हकी प्ररूपणाकरनेमें आतीहै, तैसेही पौष--आषाढ बढनेकी प्ररूपणा तो शास्त्रानुसार करसकते हैं, मगर मास-पक्ष-तिथि वगैरहका वर्ताव तो लौकिक टिप्पणा मुजबही करना योग्य है।

इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रंथमें अच्छी तरहसे हो चुका है। यहां तो उसका संक्षिप्तसार मात्रही बतलाया है. मगर विशेष निर्णय करनेकी अभिलाषावाले पाठकगण इसग्रंथको संपूरणतया वांचेंगेतो सबखुलासा हो जावेगा

## छ कल्याणकों संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार.

१– कल्पसूत्र तथा आचारांग सूत्रादि आगमानुसार विशेषतासे श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकमान्य करने, और अतित-अनागत-वर्तमानकालके सर्वतीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासंबंधी सामान्यतासे पंचाशकादि शास्त्रानुसार पांचकल्याणकभी मान्य करने, इनमें कोई दोष नहींहै. मगर कितनेक लोग शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको नहीं जाननेसे पंचाशकके पांच कल्याणकों संबंधी सामान्य पाठको भोले जीवोंको बतलाकर; विशेषतासे कल्प–आचारांगादि आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करते हैं, सो अज्ञानतासे शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते हैं।

२– श्रीऋषभदेवस्वामिके राज्याभिषेकके कार्यमें तो च्यवन-जन्म-दीक्षादि कोईभी कल्याणकके कुछभी लक्षण नहीं हैं, तथा उनके मास, पक्ष, तिथि वगैरहकाभीकहीं उल्लेखनहींहै. और श्रीमहावीरस्वामिके दूसरे च्यवनरूप गर्भापहारके कार्यमें तो सर्व तीर्थंकर महाराजोंकी माताओंकी तरह त्रिशला मातानेभी १४ महास्वप्न आकाशसे उतरते हुए देखेहैं, तथा उसी दिन इन्द्रमहाराजका त्रिशलामाताकेपास आगमनहुआहै. तीर्थंकर पुत्र होनेका स्वप्नफल कहाहै, व उनके मास-पक्ष-तिथि वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य प्रत्यक्षपने शास्त्रोंमें कथन किये हुए हैं. और समवायांगसूत्रवृत्ति, लोकप्रकाशादिशास्त्रोंमें उनको अलग भव गिनतीमेंलियाहै, इसलिये गर्भापहाररूप दूसरे च्यवनके कार्यमें तो च्यवन कल्याणकपनेके सर्व लक्षण मौजूद हैं, जिसपरभी राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी ठहरते हैं, और उनको कल्याणकपने रहित कहतेहैं सो सर्वथा अनुचितहै।

३– श्रीमल्लीनाथस्वामिके स्त्रीत्वपनेमें तीर्थंकरपनेके जन्म-दीक्षादि कार्य अच्छेरारूप हुए हैं, तो भी उन्हींकोही कल्याणकपना माननेमें आताहै. तथा श्रीमहावीरस्वामि भगवानभी ब्राह्मण कुलमें देवानंदा माताके गर्भमें उत्पन्न हुए सो अच्छेरा रूपहै, तो भी उनको प्रथम च्यवनरूप कल्याणकपना मानते हैं । तैसेही गर्भापहाररूप आश्चर्यको भी दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपना माननेमें आता है, इसलिये आश्चर्य कहनेसे कल्याणकपना निषेध नहीं हो सकता. जिसपरभी आश्चर्य कहकर कल्याणकपनेका जो निषेध करतेहैं, वो लोग अपनी अज्ञानतासे यही भूल करते हैं।

४- देवानंदामाताकी कुक्षिमें भगवान आये सो ही नीचगौत्र कर्म विपाकरूपहै, उनका क्षय हुए बाद उच्चगौत्रके कर्मका उदय होनेसेही गर्भापहार करनापडाहै,तो भी शास्त्रकार महाराजोंनें तो देवानंदाकी कुक्षिमे आनेको तथा त्रिशलामाताकी कुक्षिमें आनेको,इन दोनों कार्यौंको तीर्थंकर भगवानके चरित्रमें उत्तमतापूर्वक कल्याणकारक माने हैं। जिसपरभी त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको नीचगौत्र कर्म विपाकरूप अतिनिंदनीक कहकर जो लोग वर्षोंवर्ष पर्युषणाके मांगलिक पर्व दिनोंके व्याख्यानमें प्रत्यक्ष झूठ बोलकर भगवानकी निंदा करतेहैं,सो तीर्थंकर भगवान्के अवर्णवाद बोलनेवाले होनेसे आशातनाके दोषी ठहरते हैं।

५- जैसे श्रीअभयदेवसूरिजीमहाराजने श्रीस्थंभनपार्श्वनाथजीकी प्रतिमाको प्रकट किया, उनका आशय समझेबिना कितनेक ढूंढिये व तेरहापंथी लोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कहें, तो उन्होंकी अज्ञानता समझी जावे. मगर तत्त्वदृष्टिवाले विवेकीलोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीनही कहेंगे। तैसेही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी षष्ठ कल्याणकको प्रकट किया, उनका आशय समझेबिना कितनेक लोग उनकी नवीन प्ररूपणा कहते हैं, वो उन्होंकी अज्ञानता समझनी चाहिये. मगर तत्त्व दृष्टिवाले विवेकीलोग उनकी नवीन प्ररूपणाकभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीन ही कहेंगे.

६- भगवानके शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्तिके अवयव [ पुद्गलपरमाणु ] देवानंदामाताके शरीरसे बने हुए थे, और उसी शरीरसे त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आगयेथे, यहबात आश्चर्यकारक होनेसे शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्ति बदले विनाभी शास्त्रकार महाराजोंने उनको अलग भव गिना है। उनमें प्रत्यक्षपने च्यवन कल्याणकपना दिखलानेके लियेही खास कल्पसूत्रके मूलपाठमें त्रिशलामाताने १४ स्वप्न देखेहैं उन संबंधी "ए ए चउद्दस सुमिणे, सव्वा पासेइ तित्थयर माया। जं रयणिं वक्कमई, कुच्छिंसि महायसो अरिहा ४७॥" यह पाठ लिखा है, और इसपाठकी सुबोधिका टीकामें इस प्रकार व्याख्या किया है "अत्र प्रसंगेन एतेषां स्वप्नानां गर्भकाले सकलजिनराजजननीविलोकनीयत्वं दर्शयन्नाह-एतान् चतुर्दश स्वप्नान्,सर्वाः पश्यंति तीर्थंकर मातरः। यस्यां रजन्यां उत्पद्यंते, कुक्षौ महायशसः अर्हन्तः ॥४७॥ इसी तरहसेही सर्व टीकाओंमेभी ऐसेही भावार्थका

पाठजानलेना. देखो-जिसरात्रिको तीर्थंकरभगवान माताकेगर्भमेंआकर उत्पन्नहोवें,उसरात्रिको उन्होंकीमाता गर्भकाले अर्थात् च्यवन कल्याणक समय सर्व तीर्थंकरोंकी मातायें यह१४महास्वप्न देखती हैं। ऐसेही श्री महावीरस्वामिभी त्रिशलामाताके गर्भमें आये,तब त्रिशलामातानेंभी १४महास्वप्न देखे हैं। इस ऊपरके पाठपर अच्छी तरहसे तत्वदृष्टिसे विचारकिया जावे. तो-अनादिकालकी मर्यादा मुजब सर्व तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणककी तरहही आश्विन वदी १३ की रात्रिको त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आये; उनको खास सूत्र कारने और सुबोधिका, दीपिका, किरणावली वगैरह सर्व टीकाकारोंनेभी च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै। और तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणकमें इंद्रमहाराजाका आसन चलायमानहोनेसे विधिपूर्वक नमस्काररूप'नमुत्थुणं'करना। तनिजगतमें उद्योत होना, तथा सर्व संसारी प्राणी मात्रको थोडीदेर सुखकी प्राप्ति होना, वगैरह कार्यहोतेहैं। यह अनादि मर्यादा आगमानुसार प्रसिद्धहीहै। यही सर्व कार्य आसोज वदी १३को भगवान त्रिशलामाताके गर्भमें आये तब उसीरोज होनेका ऊपरके कल्पसूत्रके मूलपाठसे तथा उन्हींकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके प्रमाणोंसेभी प्रत्यक्ष सिद्धहोताहै,क्योंकि देखो- आषाढ शुद्ध ६ को भगवान देवानंदामाताके गर्भमें आये तब उसी समय तो सिर्फ देवानंदामाताने १४ महा स्वप्न देखे सो अपने पति ऋषभदत्त ब्राह्मणको कहे, उनने स्वप्नोंके अनुसार उत्तम लक्षण वाला गुणवान् पुत्र होनेका कहा, सो बात अंगीकार किया और उसके बाद दोनो दंपति संसारिक सुखभोगते हुए काल व्यतीत करने लगे. इसप्रकार कल्पसूत्रादि सर्व शास्त्रोंमें लिखाहै, मगर भगवान् देवानंदा माताके गर्भमें आषाढशुदी६को आये,तब उसीरोज १४ महास्वप्न देखनेके सिवाय इन्द्रका आसन चलायमान होनेका व नमुत्थुणं वगैरह कोईभी च्यवन कल्याणकके कार्य होनेका उल्लेख कल्पसूत्र व भगवानके चरित्र संबंधी किसीभी शास्त्रमें देखनेमें नहीं आता. और त्रिशलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान आये,उसीरोज तो 'महापुरुष चरित्र' व 'त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र' तथा कल्पसूत्र और उन्हीकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके पाठोंसे प्रत्यक्षमेंही 'नमुत्थुणं' वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य होनेका देखनेमेंआताहै. इसलिये कल्पसूत्रमें जो'नमुत्थुणं' होनेका पाठ है, सो. आषाढ शुदी ६ के दिन संबंधी नहीं है, किंतु

आसोज वदी १३ के दिन संबंधी है, ऐसा समझना चाहिये. क्योंकि देखो— इन्द्रमहाराजने भगवानको नमुत्थुणं करके अपने सिंहासन पर बैठकर, प्राचीन कर्म उदयसे देवानंदाके गर्भमें भगवानको उत्पन्न होना पडा, ऐसा अच्छेरारूप विचारके हरिणेगमेषिदेवको आज्ञाकरके आसोज वदी १३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवानको संक्रमण करवाये, इसलिये यह सववातें आसोज वदी १३को उसी समय हुईहैं, इसलिये ८२दिन तकतो इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान नहीं होनेसे भगवान देवानंदाके गर्भमें उत्पन्नहुएहैं, ऐसा मालूमभी नहीं पडा, मगर संपूर्ण ८२ दिन गये वाद अवधिज्ञानसे मालूम पडा; तब हर्षसे विधिपूर्वक नमस्कार रूप नमुत्थुणं किया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये। इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेके दिन आसोज वदी १३ को नमुत्थुणं करनेका कल्पसूत्रादि आगमानुसार प्रत्यक्षही सिद्ध होताहै, और तीर्थंकर भगवान माताके गर्भमें आकर उत्पन्न होवें, तब इन्द्रमहाराजको अवधिज्ञानसे मालूम पडे, उसी समय 'नमुत्थु णं' रूप नमस्कार करनेकी आगमानुसार अनादि मर्यादा है, मगर उस समय वहां सामान्य नमस्कार करनेकी मर्यादा नहींहै। इसलिये 'महापुरुष चरित्र' में और 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के १० वें पर्वमें श्रीमहावीरस्वामिके चरित्रमें आसोज वदी१३को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवानको देवानंदाके गर्भमें देखकर नमस्कार किया ऐसा अधिकारहै, सो नमुत्थुणं रूप नमस्कार करनेका समझना चाहिये मगर सामान्य नमस्कार करनेका नहीं समझना। और तीर्थंकर भगवानके च्यवन समये इन्द्रमहाराज नमुत्थुणंरूप नमस्कार हमेशां करतेहैं, तथा उसीसमय तीनजगतमें उद्योत, और सर्व जीवोंको क्षणमात्र सुखकी प्राप्ति होती है, उन्हींकोही च्यवन कल्याणक मानते हैं, यही सर्व कार्य आसोज वदी १३ के रोज होनेका ऊपरके लेखसे आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसार सिद्ध होताहै. और समवायांग सूत्र वृत्ति वगैरह आगमादि शास्त्रोंमें त्रिशलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान् आये उन्हींकोही तीर्थंकर पनेके भवमें गिना है, इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको आसोज वदी १३ के रोज दूसरा च्यवनरूप कल्याणक पना मान्य करना आत्मार्थी निकट भव्य जीवोंको उचितहीहै. जिसपरभी उनको कल्याणकपनेका निषेध करनेके लिये देवानंदाके १४ महास्वप्न त्रिशलासे हरण हुए हैं, इस

लिये वो कल्याणक नहीं होसकता. ऐसा कहनेवालोंकी बडी अज्ञा-
नताहै, क्योंकि देखो- जैसे देवानंदाने मेरे १४ महा स्वप्न त्रिशला
ने हरण किये ऐसा स्वप्न देखा, वैसेही त्रिशलाभी मैने देवानंदाके
१४ महा स्वप्न हरण कियेहैं, वैसा सिर्फ एकहीस्वप्न देखती और
च्यवन कल्याणककी सिद्धि वतलानेवाले नमुत्थुणं वगैरह अन्य कोई-
भी कार्य उसीरोज न होते तथा कल्पसूत्रमेंभी "एए चउद्दस सुमिणा,
सव्वा पासेइ तित्थयरमाया । जं रयणिं वक्कमई कुच्छिसि,महायसो
अरिहा" यहपाठ अनादि मर्यादामुजब त्रिशला संबंधी न कहकर दे-
वानंदा संबंधी कहते और पार्श्वनाथस्वामिके तथा नेमिनाथस्वामिके
च्यवन कल्याणक संबंधी उन्होंकी माताओंने१४महास्वप्न देखे,उसी
समय इन्द्रकाआसन चलाय मान हुआ, तवविधिपूर्वक हर्षसे नमुत्थुणं
किया और प्रभातमें राजाओंने स्वप्न पाठकोंको बुलाकर स्वप्नोंका
फल पूछा, तव स्वप्न पाठकोंने १४ महास्वप्न देखनेसे रागद्वेषको
जितनेवाले जिने;त्रैलोक्य पूज्यनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा. इत्या-
दि च्यवन कल्याणकके कार्योंकी भलामणभी त्रिशला संबंधी न दे-
कर देवानंदा संबंधी देते. और आषाढ शुदी६ को ही नमुत्थुणं होने
वगैरह उपरके तमाम कार्योंका उल्लेख कल्पसूत्रादिमें शास्त्रकार कर-
ते,व समवायांगसूत्रवृत्तिमें अलग भवभी न गिनते और आसोजव-
दी१३को नमुत्थुणं वगैरह च्यवन कल्याणकके कोईभी कार्य नहीं हो-
ते,तवतो त्रिशलाके गर्भमें आनेको च्यवनकल्याणक नहींमानते तो भी
चल सकता,मगर ऐसा नहींहै,और आषाढ शुदी ६ को नमुत्थुणं व-
गैरह च्यवन कल्याणकके कार्य नहीं हुए, किंतु आसोज वदी १३को
हुए हैं. इसलिये आसोज वदी १३को ही च्यवन कल्याणकके तमाम
कार्य होनेसे उनको अवश्यही कल्याणकपना मान्य करना योग्य है।
और स्वप्न हरण वगैरहके वहानेसे कल्याणकपना निषेध करना सो
अज्ञानतासे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करना योग्यनहींहै. और जन्म त्रि-
शलामाताकेगर्भसे हुआहै,तथा च्यवनकल्याणकके सर्वकार्यभी त्रिश
लाके गर्भमेंआये तवहुएहैं,इसलिये त्रिशलाके गर्भमें आनेरूप च्यवन
माननाही आगम प्रमाण अनुसार और युक्तियुक्तहै,च्यवनके सिवाय
जन्मभी नहींमानसकते.यह जगत विख्यात प्रसिद्ध न्यायकी वातहै.
त्रिशलाके गर्भमें आये तव अनादि मर्यादामुजब च्यवन कल्याणकके
सर्वकार्य खाससूत्रकारनेलिखेहैं, जिसपरभी उन्होंको उत्थापनकरके
अकल्याणकरूप ठहरानेके लिये उसवातको निंदनीक कहकर बाल

जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेका अनर्थ करना सर्वथा अनुचितहै.

और जैसे-देवलोकसे च्यवन हुए बाद तथा माताके गर्भमें अवतार लेनेबाद नमुत्थुणं वगैरह च्यवन कल्याणकके कार्य होते हैं, तो भी 'कारणमें कार्यका उपचार' होता है, इसलिये च्यवनसमय नमुत्थुणं वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है। तैसेही यद्यपि देवानंदामाता के गर्भमें नमुत्थुणं हुआ तो भी आषाढशुदी६के दिननहीं, किंतु आसोज वदी १३ के दिन हुआहै, तथा उसी समय त्रिशला माताके गर्भमें जानेका होनेसे उन्हींके निमित्त भूतही 'कारणमें कार्यका उपचार' मानकर त्रिशला माताके गर्भमें आने संबंधी नमुत्थुणं वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है. और इन्द्रमहाराज भगवान्के विनयवान भक्त थे; इसलिये अवधिज्ञानसे भगवान्को देखतेही उसीसमय नमुत्थुणं किया और त्रिशला माताके गर्भमें पधराये. यदि भगवान्को अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें देखकर त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये बाद पीछेसेनमुत्थुणंकरते तो विनयभक्तिरूप मर्यादाकाभंग होता,इसलिये विनय भक्तिरूप मर्यादा रखनेकेलिये पहिले नमुत्थुणं किया और पीछे त्रिशलामाताकेगर्भमें पधराये.देखो,जैसे कोई राजा महाराजा भगवान्का आगमनसुनने मात्रसेही हर्षयुक्त होकर उसी समय उसी दिशा तरफ पहिले वहांसेही भगवान्को नमस्कारकरते हैं, और बादमें भगवानके पास वहां जाकर उचित भक्ति करते हैं। तैसेही इन्द्रमहाराजनेभी अवधिज्ञानसे भगवानको देखतेही वहांसे नमुत्थुणंरूप नमस्कारकिया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये,बाद त्रिशला माताके पासमें आकर तीन जगतके पूजनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा और देवताओंको आज्ञा करके धनधान्यादिककी वृद्धि करवाने वगैरह कार्योंसे भगवान्की उचित भक्ती करी। यह सर्व कार्य आसोजवदी१३के दिन हुएहैं,इसलिये कारणमें कार्यका उपचार माननेसे नमुत्थुणं वगैरह तमाम कार्य त्रिशलामाताके गर्भमें आने संबंधी समझने चाहिये.जिसपरभी देवानंदाके गर्भमें नमुत्थुणं होनेका कहकर त्रिशलाके गर्भमें आनेसंबंधी आसोज वदी १३के दिनको च्यवन कल्याणकपने रहित कहतेहैं उन्होंकी अज्ञानता है।

और जोबातनहीं बननेवालीहोवे;असंगतीरूप या असंभवित होवे, वोही बात कभी कालांतरमें बनजावे, उन्हीं बातको शास्त्रों में आश्चर्य कारक अच्छेरारूप कहते हैं। इसलिये जिसबातको अच्छेरा कह दिया, उस बातमें अन्य शास्त्र प्रमाणकी मर्यादा बाधक

नहीं हो सकती. इसी तरहसे भगवानकेभी देवानंदा माता तथा त्रिशलामाता दोनोंका गर्भकाल मिलकर ९ महीने और ऊपर ७॥ दिन मानतेहैं, मगर देवानंदाके गर्भमें आनेको शास्त्रकारोंने अच्छेरा कहा है. और ८२ दिन गये बाद त्रिशलाके गर्भमें आनेको तीर्थंकर पनेके भवमें गिनाहै, इसलिये देवानंदाके गर्भमें आये तब च्यवन कल्याणक के सर्वकार्य नहीं हुए, परंतु त्रिशलाके गर्भमें आये तबही च्यवनकल्याणकके सर्व कार्य हुए हैं. तो भी देवानंदाके गर्भमें भगवान आये तब माताने १४ महास्वप्न देखे, तथा ८२ दिनतक वहां विश्रामलिया और शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्ति देवानंदामाताके शरीरसे बने हैं. इसलिये देवानंदाके गर्भमें आनेकोभी भगवानके प्रथम च्यवनरूप कल्याणक पना मानते हैं। और जैसे-मारवाड, गुजरात, दक्षिण, पूर्व वगैरह देशोंमें पुत्रको दत्तक [ गोद ] लेनेमें आताहै, उनके पहिलेके मातापिता अलगहोतेहैं और पीछेपालने पोषनेवाले दूसरे मातापिता अलगहोते हैं, इसलिये उनके दो माता और दो पिता कहनेमें कोई दोष नहीं आता, मगर नाम पीछेवालोका चलता है । तैसेही भगवानकेभी देवानंदाके गर्भसे ८२दिन गये बाद आश्चर्यरूप त्रिशलाके गर्भमें आना पडा, उससे दो माता तथा दो पिता और दो च्यवन कल्याणक माननेमें आते हैं. इसलिये दोनों माताओंका गर्भकाल मिलकर ९महीने और ७॥ दिन हुए हैं, तो भी दो च्यवन कल्याणक माननेमें कोईभी शास्त्र बाधा नहीं आ सकती और कोई कुयुक्ति व वितर्कभी बाधकनहीं होसकती, इस बातको विशेष तत्त्वज्ञजन स्वयंविचार सकते हैं।

इन सर्वबातोंका विशेपनिर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रंथमें अच्छीतरहसे सर्व शंकाओंका निवारणपूर्वक खुलासा हो चुकाहै, यहां तो उसका संक्षिप्तसार बतलायाहै, और विशेप निर्णय करनेकी अभिलाषावाले तत्त्वसारग्रहण करनेवाले पाठकगण इस ग्रंथको संपूर्ण बांचेगे तो सर्वबातोंका खुलासा अच्छी तरहसे होजावेगा

---

## विवादवाले विषयों संबंधी अभिप्राय.

तपगच्छके श्रीमान् विजयधर्मसूरिजीके शिष्य श्रीमान् रत्नविजयजीने विवादवाले विषयों संबंधी पौषशुदी ३ बुधवार, श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४४३ के जैन शासन पत्रके पृष्ट ५८८ में श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी परंपरासंबंधी उपकेशगच्छ ( कवलागच्छ ) की हकीकत छपवाया है, उसका थोडासा उतारा यहांपर बतलाते हैं ।

"श्रीरत्नप्रभसूरिजीकृत सामाचारीमां लख्युंछे के.पुष्पवती थया-बाद स्त्रीने पूजा नहीं करवी. आंबिलमां २-३ द्रव्य कल्पे. तथा देव-गुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रनी टीकामां ६ कल्याणिक लख्यां छे,पजोस-णा ५० दिवसे करवा इत्यादि" तथा "वीर प्रभुना २८ भव लख्या छे, सुधर्मा, जंबु, प्रभव, सिजंभव ए चारना ८४ शाखा, ४१ गण, ८ कुल थया. आ सामाचारी तथा कल्प टीका हालनां गच्छोथी घणी प्राचीन बनेली छे, प्राचीन समयथी ६ कल्याणिक, स्त्री पूजा निषेध विगेरे प्रवृत्तिओ चाली आवीछे, जिनदत्तसूरिजी, जिनवल्लभसूरिजी विगेराने लोको खाली निंदे छे, नवुं कोईए कर्युं नथी. पजोपण जेवा वीतराग पर्वमां कल्पसूत्रना मांगलिक व्याख्यानमां चतुर्विध श्रीसंघमां अकारण कलह करी जैनभाईयोनां अंतकरण दुभावी धर्मनी निंदा करावी वर्षोवर्ष अनी ओ वातने 'अभूतद्भावचिच' करीनें कितुना कलासमां दाखल करवी, ए कोई रीते इच्छवा योग्य नथी, शासन प्रेमी महाशयो आ बाबत बराबर समजी गया हशे, [अयं निजपरोवेत्ति, गणनालघु चेतसा। उदार चरितानां तु,वसुधैव कुटुंबकम्' ॥१॥ ] आमा 'वसुधैव कुटुंबकं' ए वाक्य अत्यंत श्रेष्ठ छे पण अने बदले 'सर्व गच्छ कुटुंबकं' एवुं बनो,एज प्रार्थना, याचना अने सलाह" यहीलेख उसीअरसेमे जैनपत्रमेंभी प्रकाशित होगयाहै औरभीजेठवदि१बुधवार वीर सं०२४४४ के जैनशासनपत्रकेपृष्ठ१६८ में श्रीरत्नविजयजीनें पर्युषणामें समभावरखनेसंबंधी लेख छपवाया-था,उसमेसे थोडासावतलातेहै."दरेकगच्छनीपट्टावलीजुओ,तेमांपरस्पर पठनपाठन साथे रहेता,वंदनादि व्यवहार करता,विनयमूल धर्मनी पुष्टि करनाराहता,आजे विरोधभाव करनारा बीकनथीरास्वता. खरतरगच्छना आचार्योने सत्कारआपनारा तपगच्छना साधुओहता अने तपगच्छनाआचार्योनें बहुमान आपनारा खरतरगच्छनासाधुओ हता, तपगच्छनां जेवा परम प्रभाविक पुरुषो थयाछे.तेवाज खरतर गच्छमां परम प्रभाविक पुरुषो थया छे.जिनदतसूरिजी, जिनकुशल सूरिजी जेणे सवालाखनवा जैनो बनाव्या,हजारोराजा महाराजाओनें जैन धर्म अंगीकार कराव्यो, हजारो क्षत्रीयोनें ओसवाल बनाव्या, जिनचंद्रसूरि,जिनहर्षसूरि जिनप्रभसूरि आदि अनेक प्रभाविक पुरुषो थया. तेवा महा पुरुषोना अवर्णवाद बोलवा,आवते भवे जीभ पामवी मुश्किल छे. उपकारी नो उपकार रदी करवो महा भयंकर पाप छे, एक खास मुद्दो तपाशोके आजे साधुओ वखाणमां टीकाओ

वांचेछे तथा चरित्रोनां चरित्रो वांचेछे, ग्रंथो वांचेछे ते घणेभागे खरतर गच्छना बनावेला ग्रंथो छे, परस्पर गच्छवालाओ वांचे छे सर्वे गच्छवालाओ श्रद्धाथी सांभले छे ' पुरुष विश्वासे वचन विश्वास' जेना बनावेला पुस्तको हाथमां लई सन्मुख धरी वांचो छो, अने मोढेथी तेज आचार्योनी बद बोई कराय. आजे दादा साहेबने मानवा वाला चरण पादुकाना दर्शन करनारा तपगच्छवाला हजारो भाविक भक्तो छे तथा श्री हीरविजयसूरि प्रमुखने माननारा खरतरगच्छना हजारो भाविक भक्तोछे. आवा शंभु मेलामां खाली विक्षेप पेदा करवाथी कोईनुं कल्याण थवानुं नथी " इत्यादि.

देखो-ऊपर मुजब खास तपगच्छके श्रीरत्नविजयजीके लेख-पर खूब दीर्घ दृष्टिसे विवेकपूर्वक विचार किया जावे, तो श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी परंपराके श्रीदेवगुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रकी प्राचीन टीका वगैरह शास्त्रानुसार पहिले पूर्वाचार्योंके समयसेही श्रीवीर प्रभुके २८ भव, तथा छ कल्याणक मानने वगैरह बातें प्रचलीतही थी. उन्हीके अनुसार श्रीजिनवल्लभसूरिजी वगैरह महाराजोंने चैत्यवासियोंको हटाते हुए, भव्य जीवोंके सामने विशेषरूपसे प्रकटपने कथन की हैं । परंतु शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणा नहीं की, जिसपरभी आगमप्रमाणोंको उत्थापन करके शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझेबिना अपनी मतिकल्पनासे शास्त्रपाठोंके खोटे खोटे अर्थ करके नवीन छठे कल्याणककी प्ररूपणा करनेका झूठा दोष लगाते हैं. सो प्रत्यक्षपणे मिथ्याभाषणकरके अपने दूसरे महाव्रतका भंग करना और भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरना सर्वथा अनुचितहै ।

और श्रीजिनवल्लभसूरिजी, श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जैसे शासन प्रभावक परम उपकारी पुरुषोंने, चैत्यवासियोंकी उत्सूत्रप्ररूपणाके तथा शिथिलाचारके मिथ्यात्वको हटाया, और क्षत्री-ब्राह्मणादि लाखों अन्य दर्शनियोंको प्रतिबोधकर जैनी श्रावक बनाये, उन्होंकीही वंश परंपरा वाले अभी वर्तमानमेंभी गुजरात, कच्छ, मारवाड, पूर्व, पंजाब,दक्षिणादि देशोंमें लाखों जैनी विद्यमान मौजूद हैं । इसलिये उन महाराजोंने परंपराके हिसाबसे करोडो जीवोंको सम्यक्त्व प्राप्त कराने संबंधी बडाभारी महान् उपकार किया है। तथा विद्या,मंत्र, देवसाह्य,व संयमानुष्ठान-आत्मशक्ति प्रकाशित करके बहुत बडीभारी. जैनशासनकी प्रभावना करी. उन महाराजोंके प्रतिबोध हुए श्रावकोंकी वंश परंपरावाले श्रावकोंसेही, वर्तमानिक

सवगच्छवाले वहुतसाधुओंको आहार,पानी,तथा संयम उपकरणोंसे निर्वाह होता है। ऐसे महान् शासन प्रभावक परम उपकारी महाराजोंने पूर्वाचार्योंकी प्रवृत्ति मुजव तथा आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसारही सत्य प्ररूपणाकरीहै, मगर शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणानहींकरी. जिसपरभी कितनेक पक्षपातीजन उपकारी महाराजोंके उपकारोंको छुपादेतेहैं, और छठे कल्याणक प्रकटकरनेकी तथा स्त्रीपूजा निषेधकरनेकी नवीनप्ररूपणाकरनेकाझूठा दोषलगाकर अनेक तरहसे निंदा करते हुए आक्षेप करते हैं। उन्होंको परभवमें जीभ मिलना मुश्किलहै यहबात तपगच्छवालेही गुणानुरागी मध्यस्थ भावसे लिखतेहैं। अर्थात् ऐसे उपकारोंको भूलकर झूठा दोष लगाकर निंदा करनेवाले एकेन्द्रिय होवेंगें, फिर उन्होंको जैनधर्म प्राप्त होना वहुत मुश्किल होवेगा, संसारमें वहुत काल परिभ्रमण करेंगे. इसलिये भवभिरु आत्मार्थी भव्य जीवोंको संसार परिभ्रमण के हेतुभूत उपकारी पुरुषोंकी झूठी निंदा करके भोले जीवोंको मिथ्यत्वमें गेरनेरूप अनर्थ करना सर्वथा अनुचित है।

और ऊपरके लेखसे श्रीरत्नविजयजीके लेखमुजव तपगच्छके तथा खरतरगच्छके आपसमें विशेषरूपसे संपकी वृद्धि होना चाहिय और कुसंपके कारण भूत पर्युषणामें खंडनमंडनके विवाद वाले विषयोंको सर्वथा त्याग करके संपसे शासन उन्नतिके कार्योंमें कटिबद्ध होना, यही अपने और दूसरे भव्यजीवोंकेभी आत्म कल्याणका हेतु है। ऐसी ही श्रद्धा तथा प्ररूपणा और प्रवृत्तिका शुद्ध हृदयसे व्यवहारकरके उपकारी पुरुषोंकी झूठीनिंदा छोडकर; प्राचीन पूर्वाचार्योंकी परंपरामुजब शास्त्रानुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा पर्वका अराधन करके तथा श्री महावीर स्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकोंको आगमानुसार भावपूर्वक मान्य करके भगवान्की आज्ञानुसार धर्मकार्योंसे निज और परका कल्याणकरो,संसार परिभ्रमणके,दुःखसे छुटो,और अक्षय सुख प्राप्त करो. यही आत्मिक हृदयकी विशुद्ध प्रेम भावसे आत्महितैषी पाठक गण भव्यजीवोंके प्रति प्रार्थनाहै. इति शुभम्.

---

विक्रम संवत् १९७७, प्रथम श्रावण शुदी १२ वुधवार.
हस्ताक्षर - श्रीमान् उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके लघुशिष्य—मुनि- मणिसागर. जैन धर्मशाल, धुलिया—खानदेश.

---

श्रीवीतरागाय नमः।

# दूसरे भागकी पीठिका

## इनकोंभी पहिले अवश्यही वांचिये.

अब हम यहांपर दूसरे भागकी पीठिकामें न्यायरत्नजी शांतिविजयजी संबंधी थोडासा लिखतेहैं, जिसमें ३ वर्ष पहिले दो भाद्रपदहोनेसे पर्युषणापर्व प्रथम भाद्रपदमें करने या दूसरेभाद्रपदमें,इस विषयकी मुंबईशहरमें चर्चा खूब जोरशोरसे दोनोंतरफसे चलीथी. उससमय मैंनेभी 'लघुपर्युषणा निर्णयका प्रथमअंक' नामा छोटासी पुस्तकमें मुख्य २ सर्व बातोंकी शंकाओंका समाधान अच्छीतरहसे लिखदियाथा. वह पुस्तक एकश्रावकनेछपवाकर प्रसिद्धकरीथी.उस पर न्यायरत्नजीने उनपुस्तककी शास्त्रानुसार सत्य२ बातोंको ग्रहण तो नहींकरी और मेरे सबलेखोंको अनुक्रमसे पूरेपूरे लिखकर पीछेउनसबका जवाब देनेकीभी ताकत न होनेसे जानबूझकर कुयुक्तियोंसे अनेकबातें शास्त्रविरुद्ध लिखकर'पर्युषणपर्वनिर्णय' तथा'अधिकमास निर्णय'में प्रकटकरीथी.उसपर मैंने उन दोनों पुस्तकोंकी शास्त्रविरुद्ध बातोंसंबंधी शास्त्रार्थसे सभामें निर्णय करनेकेलिये न्यायरत्नजीको जाहिररूपसे छपवाकर सूचना दीथी. उसका लेख नीचे मुजबहै.

### विज्ञापन, नं० ७

### न्यायरत्नजी शांतिविजयजी सावधान ! शास्त्रार्थके लिये जलदी तैयार हो.

मैंने- आपको शहर पुणामें शास्त्रार्थ संबंधी विज्ञापन नंबर १-२-३-४ भेजेथे और वर्तमानिक पर्युषणाकी चर्चासंबंधी आपकीबनाई 'पर्युषणापर्वनिर्णय' किताब "शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध, जिनआज्ञा बाहिर और कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेवालीहै," यह सूचना विज्ञापन नंबर पहिलेमें लिखकर,इसका विशेष खुलासा मुंबईकी सभामें शास्त्रार्थ द्वारा करनेके लिये आपको आमंत्रण कियाथा और श्रीकच्छी जैनअसोसीयन सभानेभी सब मुनिमहाराजोंकी तरह आपकोंभी पर्युषणाका निर्णय करनेसंबंधी विनतीपत्र भेजाथा, जिसपरभी आपने मुंबईमें शास्त्रार्थकरना मंजूर न

किया और दूसरोंपर गेरकर मौनही करबैठे, तथा दूरसेही फिर "अधिकमासनिर्णय" की छोटीसी किताब छपवाकर प्रगटकी उसके बाद थोडे रोज पीछे आप मुंबई दादर आये, तब मैंने आपको दोनों किताबों संबंधी शास्त्रार्थकरनेकी सूचना पत्रद्वारा दीथी उसकी नकल नीचे मुजब है :—

"श्रीदादर मध्ये श्रीमान् न्यायरत्नजी शांतिविजयजी योग्य श्रीमुंबईवालकेश्वरसे मुनि मणिसागरकी तरफसे सूचना. मैंने कलरात्रिको आपके दादर आनेकासुनाहै उससेआपको सूचनादेताहूं,कि-आपने "पर्युषणापर्व निर्णय" और "अधिकमासनिर्णय" दोनोंपुस्तकोंमें बहुत जगह शास्त्रविरुद्ध होकर उत्सूत्र प्ररूपणारूप लिखाहै, आपने दोनोंपुस्तकोंमें सर्वथा शास्त्रविरुद्ध और कल्पित बातोंकाही संग्रहकियाहै, इसलिये हम सभामें शास्त्रार्थसे आपकी दोनों पुस्तकें जिनाज्ञाविरुद्ध सिद्ध करनेको तैयारहैं, शास्त्रार्थ किये विना आप चले जावोंगे तो झूठे समझे जावोंगे, विशेष क्यालिखुं, शास्त्रार्थका विज्ञापन नं. १ आपको पहिलेभी भेज चुका हूं, फल दादर आवुंगा. आप जाना नहीं. इसका उत्तर अभीही लालबागमें आदमीके साथ पीछा भेजना मैं लालबाग जाताहुं, हस्ताक्षर मुनि-मणिसागर, पौष शुदी १ रविवार, सं० १९७४." इस मुजबपत्र पौषशुदी१ को आदमी भेजकर आपकोपहुंचाथा,और दूजके दिन खास मैं और मुनि श्रीलब्धिमुनिजी, तथा अंचलगच्छीय मुनि दानसागरजी और केवलचंदजी चारोंही ठाणे दादर आये, और शास्त्रार्थ करनेका आपसे कहा, तब आपनेभी अन्य मुनियोंकी तरह आनंदसागरजीकी आड लेकर दो महीनोंबाद शास्त्रार्थकरनेका कहाथा,सो २महीनेकी जगह ४ महीने होगये, अब जलदी करो. आनंदसागरजी तो आडी आडी बातोंसे दूसरेका नाम आगे करतेहैं, अपना नामसे लिखतेभी डरते हैं, तो सभामें नियमानुसार क्या शास्त्रार्थ करेंगे, और आपने किताबें बनवानेमें किसी अगेवानोंकी व आनंदसागरजी वगैरह मुनियोंकी आड न ली, तो फिर उसका खुलासा करनेमें दूसरोंकी आड लेते हो— यही आपका अन्याय समझा जाताहै. वालकेश्वरमें जब हमारे गुरुजी महाराजकेसाथ आपकी मुलाकात हुईथी, तबभी झगडीया वगैरह तीर्थयात्राको जाकर आये बाद शास्त्रार्थ करनेका मंजूर कियाथा, सो आप यात्राकरके आगये, अब आमनेसामने या लेख द्वारा वा सभामें आपकी इच्छाहो वैसे शास्त्रार्थ करना मंजूरकरिये,

और विशेष सूचनायें विज्ञापन, नंबर ६ से समझ लीजिये. और नि-
यममी जो आपकीइच्छा हो सो प्रतिज्ञापत्रके साथ १५ दिनके भीत-
र प्रगट करीये, आनंदसागरजी, विजयधर्मसूरिजी, विद्याविजयजी
व न्यायविजयजीकी तरह आडीआडी वातें निकालकर शास्त्रार्थ क-
रना मंजूर न करोंगे,तो-आपकीभी हार समझीजावेगी. अथवा श्री-
कच्छी जैनएसोसीयनकी विनतीके अनुसार व मेरे विज्ञापनोंके अ-
नुसार यदि आपको मुंबईमें ठहरकरसभामें शास्त्रार्थ करनेमें अनुकू-
लतानहोव तो लीजिये चलिये-लेख द्वाराही सही, मगर विज्ञापन नं-
बर६ मुजब प्रतिज्ञा वगैरह नियमोंके साथ उत्तर दीजिये. देखो—
न्यायरत्नजी मेरे बनाये ' लघुपर्युषणानिर्णय के प्रथम अंक 'के
सब लेखोंका न्यायसे पूरेपूरा उत्तर देनेकी आपमें ताकत नहीहै, य-
दि होती तो उसके पृष्ठ२-४-५-६-७ और १०में अधिकमासमें सूर्यचा-
र न होवे, वनस्पति न फूले, वैगरह सुबोधिकाकी ११बातोंका खु-
लासा मैने लिखाथा. उनसबको लिखकर अनुक्रमसे पूरा उत्तर क्यों
न दिया,यदि भूल गयेहो, तो अभीही देवो । और पृष्ठ १७ के अंतके
पाठका खुलासाभी साथही करो ॥ और मैने ' लघुपर्युषणा निर्णय '
में निशीथचूर्णि और दशवैकालिक बृहद्वृत्तिके पाठसे अधिकमास-
को कालचूला कहकरकेभी दिनोंकी गिनतीमेंलेनेका सिद्धकर दिखा-
याहै, इसलिये दिनोंकीगिनतीमें निषेधनहींहो सकता, देखो-लघुपर्यु-
षणानिर्णयके पृष्ठ २४-२५ ॥ और लौकिक शास्त्रानुसारभी अधिक-
मासको दिनोंमें गिनाहै, देखो-लघु पर्युषणानिर्णय के पृष्ठ २८-२९ ॥
और अधिकमासमें मुहूर्तवाले शुभकार्य न होवें, उसीतरह चौमासे-
में, सिंहस्थमें,गुरुशुक्रके अस्तमें, पौष- चैत्र मलमासमें, क्षयमासमें,
वदीपक्षकी १३-१४ और अमावास्या इन तीनक्षीणतिथियोंमें,और वै-
धृति-गंडांत-व्यतिपात-भद्रा वगैरह कुयोगोंमें, तिथी, वार, नक्षत्र
चंद्रादि बहुत मास-पक्ष-वर्ष-दिन वगैरह योगोंमेंभी मुहूर्तवाले शुभ-
कार्य न होवे, देखो—ज्योतिःशास्त्रे "जंमारिरिति पुरोहिते हरिगते,सुते
मूर्छ्छरविमी । जातेधर्मधने घनशफट्योः क्षीणे कुमारस्तिथिः॥ अस्ते-
भार्गव जीवयोः कुदिने, मासाधिके वैधृतौ । गंडांते व्यतिपात विष्टि-
कं शुभं, कार्य न कार्य बुधैः ॥ १ ॥" मगर दान, शील, तप, भाव,
सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध वगैरह धर्मकार्य अधिक मासमें भी
होसकतेहैं । उसी तरह पर्युषणापर्वभी दिन प्रतिबद्ध होनेसे अधिक-
मासमें करनेमें कोई बाधा नहीहै । देखो लघुपर्युषणा निर्णयके पृष्ठ

२७-२८ ॥ और मासवृद्धि होनेपरभी पर्युषणाके पिछाडी ७०दिन र-हनेका किसीभी शास्त्रमें नहींलिखा, समवायांगका पाठ तो मास वृ-द्धिके अभावकाहै, इसलिये अधिकमास होनेपरभी ७० दिन रहनेका कहना शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध होनेसे मिथ्याहै, देखो लघुपर्यु-पणा निर्णयके पृष्ठ १८-१९-२०-२१ ॥ इसीतरहसे दोनोंआषाढ वगैर-हका खुलासाभी लघुपर्युषणाके पृष्ठ २५-२६में अच्छी तरहसे दिख-ला दिया था ॥ जिसपरभी न्यायरत्नजी आपने मेरे लेखोंका आगे पीछेका संबंध तोडकर मेरे अभिप्रायके विरुद्ध होकर अधूरे अधूरे लेख, भोलेजीवोंको दिखलाकर अपनी दोनों किताबोंमें आप वारंवा-र अधिकमहीनेके दिनोंको गिनतीमेंसे उडा देनेकेलिये कोईभीशास्त्र-कापाठ बतलाये विनाही, और लघुपर्युषणाके पृष्ठ २७-२८ का लेख-को पूरा विचारे विनाही,'अधिकमासनिर्णय'के दूसरे पृष्ठकी आदिमें आप लिखते होकि'अधिकमहिनेमें विवाह सादी वगेरा कामनहींकि-येजाते, दीक्षा प्रतिष्ठा वगेरा धार्मिक कामभी अधिकमहीनेमें नहीं-कियेजाते, फिर पर्युषणापर्व जैसा उमदापर्व अधिकमहिनेमें कैसे-कियाजाय.' तथा 'पर्युषणापर्व निर्णय' के मुख्यपृष्ठ परभी 'दीक्षा प्रतिष्ठा और दुनियादारीके विवाह सादी वगेराकाम अधिकमहीनेमें नहीकियेजाते,तो फिर पर्युषणापर्व जैसा उमदापर्व कैसेकिया जाय' यह दोनों लेख आपके जिनाज्ञाविरुद्ध उत्सूत्र प्ररूपणारूपहीहैं. यदि मुहुर्त्तवाले दीक्षा प्रतिष्ठा व संसारी विवाह सादीकी तरह पर्युषणा भी आप मानोंगे, तबतो चौमासेमें, तथा १३ महीनों तक सिंहस्थ-वाले वर्षमेंभी पर्युषणा करनाही नहीं बनेगा, मगर शास्त्रोंमें तो चौ मासेमेंही और सिंहस्थवाले वर्षमेंभी वर्षा ऋतुमेंही दिनोंकी गिनती से५०वेंदिन अवश्यही पर्युषणा करनाकहाहै, मुहूर्त्तवाले विवाहसादी वगैरह लौकिक कार्योंके साथ, विना मुहूर्तवाले लोकोत्तर पर्युषणाप-र्वका कोईभीसंबधनहीहै.सिंहस्थ,अधिकमास, क्षयमास,गुरु शुक्रका अस्त,चौमासा,व्यतिपात, भद्रा,और चंद्र व सूर्य ग्रहण वगैरहकोईभी योग पर्युषणा करनेमें बाधक नही होसकते, इसलिये आपका उत्सू-त्र प्ररूपणाका और प्रत्यक्ष अयुक्त व मिथ्यालेखको पीछा खींच ली-जिये और मिच्छामिदुक्कडं प्रकट करिये, नहीं तो सभामें सिद्ध क-रनेको तैयार हो जाइये ॥ १ ॥ औरभी आपने 'मानव धर्म संहिता' के पृष्ठ ८०० में लिखाहै कि "अगर अधिकमास गिनतीमें लियाजा-ता हो तो पर्युषणापर्व दूसरे वर्ष श्रावणमें और इसतरह अधिकम

हीनोके हिसावसे हमेशां उक्त पर्व फिरते हुए चले जायेंगे जैसे मुसलमानोके ताजिये-हर अधिकमासमें बदलतेहैं" यह लेखभी उत्सूत्र प्ररूपणारूपहीहै, क्योंकि जिनेंद्रभगवान्ने अधिकमहीना आनेपरभी वर्षाऋतुमेंही पर्युपणा करना फरमायाहै, मगर वर्षाऋतुविना माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाखमें शरदी व धूपकालमें पर्युपणा करना नहीं फरमाया, जिसपरभी आप अधिकमहीनाके ३० दिन उड़ा देनेकेलिये मुसलमानोके ताजियोंके दृष्टांतसे हर अधिक महीनेके हिसाबसे बारोंही महीनोंमें [ छही ऋतुओंमें ] पर्युपणा फिरते हुए चले जानेका बतलाते हो, सो किस शास्त्र प्रमाणसे उसकाभी पाठ बतलाइये, या अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं दीजिये, अथवा सभामें सत्य ठहरनेको तैयार हो जाईये ॥ २ ॥ और भी 'पर्युपणापर्व निर्णय' के मुख्यपृष्ठपर 'अधिकमहीना जिसवर्षमें आवे उसवर्षका नाम अभिवर्द्धित संवत्सर कहते हैं और वो अभिवर्द्धित संवत्सर तेरह महीनोंका होता है, मगर अधिक महीना कालपुरुपकी चूला यानी चोटी समान कहा इसलिये उसको चातुर्मासिक- वार्षिक और कल्याणिकपर्वके व्रत नियमकी अपेक्षा गिनतीमें नहीं लियाजाता' तथा 'अधिकमास निर्णय' के प्रथम पृष्ठके अंतमें 'अधिक महीना कालपुरुपकी चूला यानी चोटीसमानहै, आदमीके शरीरके मापमें चोटीका माप नहीं गिनाजाता, इसतरह अधिक महीना अच्छे काममें नही लियाजाता' इस लेखसे अधिक मासको केशोंकी चोटी समान कहतेहो और गिनतीमें लेना निषेध करते हो सोभी सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध है, देखो-चोटी तो १०-२० अंगुल, अथवा १-२ हाथ लंबीभी होसकतीहै, व नहीभी होतीहै. और शरीरके मापमें चोटीका कुछभी भाग नहीलियाजाता, इसीतरह यदि अधिकमासभी चोटी समान गिनतीमें नहीं लियाजाता तो फिर उसको गिनतीमें लेकर १३ महीनोंके, २६ पक्षोंके, ३८३दिनोंका अभिवर्द्धित संवत्सर क्यों कहा? देखिये-जैसे पर्वतोंकेशिखर और घास एकसमाननहीं है तथा मंदिरोंकेशिखर और ध्वज एक समाननहींहै. तैसेही चूला याने शिखर और चोटीएकसमाननहींहै इसलियेचोटीकहोंगे तो गिनतीमेंनहीं और गिनतीमें लेवोगे तो चोटी समाननहीं. चोटीकहोगे तो अभिवर्द्धित संवत्सर कैसे बना सकोगे? इसको विचारो, अधिकमासको चोटी समान कहकर गिनतीमें छोडना किसीभी जैनशास्त्रमें नहीं कहा, निशीथचूर्णि व दशवैकालिक वृत्तिमें कालचूला याने शिखरकहाहै;

और गिनतीमेंभी लियाहै, देखो लघुपर्युषणाके पृष्ठ २५ में. इसलिये शिखरको चोटी कहना और गिनतीमें छोड देना बडी भूल है ॥३॥ इसीतरहसे अधिकमहीनेमें धर्म, ध्यान, व्रत, पच्चख्खान, तप, जप, चौमासी, पर्युषणा, कल्याणकादि धर्म कार्य निषेध करना ॥ ४ ॥ वर्त-मानिक श्रावण, भाद्रपद, आश्विन वढनेपरभी समवायांग सूत्रवृत्ति कारका अभिप्राय को समझे विनाही पीछे ७० दिन ठहरनेका आ-ग्रह करना ॥ ५ ॥ श्रावण-पौष वढनेपर एक महीनेमें कल्याणिक मा-ननेसे दूसरे महीनेको छुटनेका कहकर अधिकमासके ३० दिन उ-डादेना ॥ ६ ॥ दो आषाढ होनेपर प्रथम आषाढको कालचूला ठह-राना ॥ ७ ॥ दूसरे आषाढमें चौमासी करनेसे प्रथम छुट जानेका क-हना ॥ ८ ॥ और नवतत्त्व—षट्द्रव्यके स्वरूपकी तरह चंद्र और अ-भिवर्धित दोनो वर्षोंका समानही स्वरूपकहा है, तथा दोनोंसेही मा-स-पक्ष-तिथि वर्ष वगैरहका व्यवहार चलता है, तिसपरभी दिनोंकी गिनतीके विषयमें दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाकी चर्चामें विषयांतर कर-के मास व ऋतु प्रतिबद्ध कार्योंको दिखलाकर अधिकमासके दिन गिनतीमें छोड देना ॥ ९ ॥ अधिकमास आनेसे ५० वें दिन पर्युषणा पर्व करनेको जैनशास्त्र खिलाफ ठहराना॥१०॥और पंचाशकके पूर्वा-पर संबंधवाले संपूर्ण सामान्य पाठको छोडकर शास्त्रकार महारा-जके अभिप्रायको समझेविना थोडासा अधूरा पाठ भोलेजीवोंको दि-खलाकर, वीरप्रभुके विशेषतासे आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करना ॥ ११ ॥ और सुबोधिकाकी तरह समयसुंदरोपाध्यायजी कृत कल्पलतामें खंडन मंडनका विषय संबंधी कुछभी अधिकार नहीहै. तो भी झूंठा दोष आरोप रखना ॥ १२ ॥ इत्यादि अनेक बातें आप-की दोनों कीतावोंमें शास्त्रविरुद्ध व प्रत्यक्ष मिथ्या और बालजीवों-को उन्मार्गमें गेरनेवाली भरीहुईहैं, उसका लेख द्वारा या सभामें निर्णय करनेको तैयार हो जाईये, मगर झुंठेको क्या प्रायश्चित देना वगैरह नियम होने चाहिये. वीरनिर्वाण २४४४, विक्रमसंवत्१९७५, वैशाखवदी १२, हस्ताक्षर–मुनि–मणिसागर, लालबाग, मुंबई.

उपर मुजब छपाहुआ विज्ञापन न्यायरत्नजीको पहुंचाया मगर उसमें लिखेप्रमाणे सभामें आकर शास्त्रार्थ करनेका मंजूर नहीं किया तथा इन विज्ञापनमें बतलाई हुई उत्सूत्र प्ररुपणारूप अपनी भूलोंको सुधारनेकाभी प्रकट नहीं किया, और शास्त्रप्रमाणसे साबित करके भी बतला सकेनहीं.सर्वथा मौनकरबैठे तब हमने उनकीहारका वि-ज्ञापन छपवाकर प्रकाशित कियाथा सो नीचे मुजब है :–

## विज्ञापन नं० ९

## न्यायरत्नजी शांतिविजयजी हार गये!

सत्याग्राही पाठकगणसे निवेदन कियाजाताहै, कि-न्यायरत्नजी शांतिविजयजी को पर्युषणा बाबत सभामें शास्त्रार्थ करनेके लिये मैंने विज्ञापन नं.७ वेंमें सूचना दीथी, उसमें १५ दिनके भीतर शास्त्रार्थ करना मंजूर न करोंगे, तो आपकी हार समझी जावेगी, यह बात खुलासा लिखीथी. और वैशाख शुदी १०को विज्ञापन नं. ७-८ के साथ १ पत्रभी उनको डाक मारफत रजिष्टरी द्वारा'ठाणे' भेजाथा, उसमें १५ दिनकी जगह २० दिनका करार लिखाथा, उसको आज २२दिन होगये, तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करना मंजूर नहींकिया और वैशाख शुदी १३ को फिरभी दूसरा पत्र भेजाथा उसमें हमने ठाणेमेंही शास्त्रार्थ करना मंजूर कियाथा. उसकाभी कुछभी उत्तर न मिला और लेखद्वारा शास्त्रार्थ शुरू करनेके लिये प्रतिज्ञापत्र व साक्षी वगैरह नियमभीप्रगटनहींकिये.इससे मालूमहोताहैकि,न्यायरत्नजीमें न्यायानुसार धर्मवादका शास्त्रार्थकरनेकी सत्यता नहींहै, इसलिये चुप लगाकर बैठेहैं,उससे वो हारगये समझे जातेहैं.पाठकगणको मालूम होनेके लिये दोनों पत्रोंकी नकल यहां बतलाते हैं.

प्रथम पत्रकी नकल " श्रीमान् न्यायरत्नजी शांतिविजयजी विज्ञापन नं० ७-८ भेजता हूं. लघुपर्युषणा निर्णयके सत्य सत्य लेख छोडदिये और मेरेअभिप्रायविरुद्ध उलटा उलटाही लिखमारा,वैसा अब न करना. सबका पूरा उत्तर देना, आजसे १५-२० दिन तकमें वैशाख शुदी १० सोमवार. हस्ताक्षर मुनि—मणिसागर. "

दूसरे पत्रकी नकल "श्रीठाणा मध्ये न्यायरत्नजी शांतिविजयजी योग्य श्रीमुंबईसे मुनि-मणिसागरकी तरफसे सूचना.

१—आप ठाणेमें शास्त्रार्थ करनाचाहते हो सो, हम ठाणे आनेकोभी तैयार हैं. मगर विज्ञापन नं० ६ की ३-४-५ सूचनां मुजब नियम मंजूरकरो और कल्पसूत्रकी कोनर प्राचीनटीका आप मानते हो उत्तर दो, ठाणेकी कोटघालीमें शास्त्रार्थ होगा.

२—शास्त्रार्थ आपका और मेराहै, इसमें मुंबई के सब संघको व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं है, आप संघको बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरी है, न सब संघ बीचमें पडे और न हमारी पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो.

ताकत हो तो मुंबईकी पोलीश चौकी कोटवालीमें शास्त्रार्थ कर-
नेको आवो, दूरसे कागज काले करके मनमानी आडीअवळी लंबी चोडी
झूठीझूठी बातें लिखकर भोलेजीवोंको भरमानेका काम नहीं करना.

३—दोनोंको सब लेख सिद्ध करके बतलाने पडेंगे. उसमें झूठे-
को क्या आलोयणा लेनी, सो लिखो. वैशाखशुदी १३."

न्यायरत्नजी आपकी धर्मवाद करनेकी ताकातहोती तो इतने दिन
मौनकरके क्यों बैठे, खैर!!! जैसी आपकी इच्छा. मगर याद रखना
सभामें योग्य नियमानुसार शास्त्रार्थ न करना, और अपने झूठे पक्ष-
की बात रखनेके लिये वितंडावाद करना या सामने न आकर सा-
क्षि व प्रतिज्ञा विनाही दूरसे कागज काले करते रहना और विपर्यां-
तर व कुयुक्तियोंसे उत्सूत्रप्ररूपणाकी आपकी दोनों कीतावें सच्ची
बनाना चाहो सो कभी नहीं हो सकेगा, किंतु इसके विपाक भवां-
तरमें अवश्यही भोगनेपडेंगे. मरीचि और जमालिसेभी आपका उत्सूत्र
बहुत ज्यादे है, आत्महित चाहते हो तो हृदयगम करके प्रायश्चित्त
लेवो, उससे श्रेय हो. तथास्तु. सं० १९७५ ज्येष्ठ शुदी २ सोमवार.
हस्ताक्षर-मुनि मणिसागर.

इसप्रकार उपरमुजब लेख प्रकटहोनेसे न्यायरत्नजी 'झूठेहैं इस-
लिये चुप लगाकर बैठे हैं' इत्यादि बहुत चर्चा होने लगी तब अपनी
झूठी इज्जत रखनेकेलिये १ हेंडबील छपवाया उसमें लिखाथा कि,
' सभा हुईनहीं शास्त्रार्थ हुआनहीं फिर हारजीत कैसे होसके ' इसके
जवाबमें हमनेभी विज्ञापन १०वा छपवाकर उनके लेखका अच्छीतर-
हसे खुलासा कियाथा वो लेखभी नीचे मुजबहै :-

## विज्ञापन, नंबर १०.

## श्रीतपगच्छके न्यायरत्नजी शांतिविजयजीके हारका कारण, और उनकी अधिकमासके शास्त्रार्थकी जाहिर सूचनाका उत्तर.

१-न्यायरत्नजी लिखतेहैंकि, 'सभाहुईनहीं शास्त्रार्थहुवानहीं फिर
हारजीत कैसे होसके' जवाब-आपकी हारका कारण विज्ञापन ७वें में
और ९ वें में लिख चुका हुं. उसको पूरेपूरा लिखकर सबका उत्तर
क्यों न दिया? फिरभी देखिये-मेरे विज्ञापन नं. ७ के सब लेखोंका
पूरेपूरा उत्तर नियत समयपर आप देसकेनहीं १, विज्ञापन ६ मुजब
सभाके नियमभी मंजूर किये नहीं २, आजकल बारंबार मुंबईमें आ-